रामाश्रम सत्संग प्रकाशन

संत-प्रसादी

(भाग–10)

अध्यक्ष, रामाश्रम सत्संग

डा. करतार सिंह जी

के प्रवचनों का संकलन

रामाश्रम सत्संग (रजि.)

9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड,

ग़ाज़ियाबाद–201009 (उ.प्र.)

Scanned by CamScanner

रामाश्रम सत्संग प्रकाशन

संत-प्रसादी

(भाग-१)10

अध्यक्ष, रामाश्रम सत्संग

डा. करतार सिंह जी

के प्रवचनों का संकलन

रामाश्रम सत्संग (रजि.)
9-रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड,
ग़ाज़ियाबाद-201009 (उ.प्र.)

Scanned by CamScanner

प्रकाशक
अध्यक्ष एवं आचार्य, रामाश्रम सत्संग (रजि.)
वर्तमान मुख्यालय, गाजियाबाद (उ.प्र)

सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रथम संस्करण 1000 प्रतियाँ (2010)

मूल्य
मात्र 15/- (पंद्रह रुपये)

प्राप्ति स्थान
व्यवस्थापक, राम संदेश पत्रिका
9-रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड, गाजियाबाद

मुद्रक
अंकोर पब्लिशर्स प्रा. लि.
बी-66, सैक्टर-6, नोएडा, उ.प्र.

Scanned by CamScanner

विषय सूचि

क्रमांक	अध्याय	पृष्ठांक
1.	बिन गुरु कीते भक्ति न होई	1–6
2.	आदर्श जीवन	7–18
3.	श्रीकृष्ण की जीवनलीला और गीता का उपदेश	19–31
4.	सावधान! समय थोड़ा है और. मानव चोला अमूल्य	32–41
5.	अपने ध्येय के प्रति जागरूक रहें व गंभीरता से प्रयास करें	42–50
6.	होली का त्योहार मनाने का वास्तविक भाव	51–60

Scanned by CamScanner

संत प्रसादी भाग 9 के विषय में –

सम्पादक व प्रकाशक की ओर से

बड़े सौभाग्य की बात है कि पूज्य संत डा. करतार सिंह जी की प्रवचन–प्रसादी का एक और संकलन प्रेमी पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है। साथ ही हर्ष की बात यह भी है कि इस पुस्तक का विमोचन वितरण 2010 में पूज्य गुरुदेव महात्मा श्रीकृष्ण लाल जी महाराज की पुण्य तिथि के सुअवसर पर करने का प्रयास किया जा रहा है।

इतने समय के पश्चात् विगत वर्ष 2009 में दीपावली पर इसी श्रृंखला की नई कड़ी – संत प्रसादी भाग–8 पेश की गई थी जिसका सुधी पाठकों ने अत्यंत उत्साह और उत्सुकता से स्वागत किया। इसी उत्साह और ललक की प्रेरणा से तथा पूज्यवर की अनुमति से स्फूर्ति पाकर संत–प्रसादी का यह सातवां भाग आपके हाथों में है ।

आशा है, रामाश्रम सत्संग के प्रकाशित साहित्य भंडार में इस 35वीं पुस्तक की बढ़ोत्तरी भी सत्संग प्रेमी भाई–बहनों के लिये लाभदायी सिद्ध होगी।

गाजियाबाद

विनीत : डा. शक्ति कुमार सक्सेना

Scanned by CamScanner

बिन गुरु कीते भक्ति न होई

सत्संग में आकर सद्गुण उत्पन्न होने चाहिये। सत्संग में आकर या घर में बैठे हुए आराधना, साधना की, किन्तु ईश्वरीय दिव्य-गुण उत्पन्न नहीं हुऐ, क्षमा करेंगे, साधना का विशेष लाभ नहीं होगा। पूज्य गुरु महाराज फरमा रहे हैं, जिन पर ईश्वर की कृपा हो जाती है, उनमें सेवा पैदा हो जाती है, अपने बल-बूते कुछ नहीं होता। नदी का जल बहता रहता है। धरती को पानी देता, धरती पानी को लेती है, उसमें खेती होती है, खेती उपजति है, संसार को लाभ पहुँचता है। नदी कुछ नहीं मांगती धरती से, वो जल दिए जा रही, दिए जा रही है। गंगा का जल बहता है, बह रहा है। लोग आते हैं, स्नान करते है, पवित्र होते हैं। अमृत जल लेते हैं, और घर भी लौट्ते हैं तो गंगा जल लेकर आते हैं। ऐसे गुण साधक में होना चाहिए कि वो अपना शरीर, अपना मन, अपना धन, अपना सब कुछ संसार की सेवा में, अप्रयास लगाते रहें। अर्थात् संसार को बिना किसी आशा के सब कुछ पहुँचाते रहें। ये उसका सहज-स्वभाव हो जाए, नदी की तरह, तब उसे समझना चाहिए कि वो सच्चा जिज्ञासु है। उसको नींद न आए, जब तक वो दूसरों को, सुख न पहुँचा सके। उसकी सहज-स्थिति होती है।

दूसरा गुण पूज्य गुरु महाराज ने बताया है। सूर्य की तरह। गुरुवाणी में भी आता है, 'ब्रह्मज्ञानी ते कछु बुरा न भया'। उससे

Scanned by CamScanner

किसी का बुरा नहीं होता अपितु उससे दूसरे का भला ही भला होता है, भला ही भला होता है। हम सोचते रहते हैं कि फलाना व्यक्ति अच्छा है, फलाना व्यक्ति बुरा है। सच्चा जिज्ञासु जो है उसके हृदय में उसके मस्तिष्क में ये बात आती ही नहीं क्योंकि उसको सभी परमात्मा स्वरूप दिखते हैं। और परमात्मा स्वरूप देखकर वो सबकी सेवा करता है। दूसरा गुण है, सूर्य की तरह उदारता। सूरज सबको दर्शन देता है, सब पर अपना प्रकाश डालता है, सब पर अपनी रोशनी प्रदान कर रहा है, सब पर ऊष्मा डाल रहा है, परन्तु कुछ नहीं मांग रहा है, कोई पापी है तब भी, कोई पतित है तब भी। सब को एक जैसा प्रकाश व ऊष्मा बांट रहा है, देता रहता है, देता रहता है, देता ही रहता है। गंगा नदी भी ऐसी ही बहती है। सूर्य भगवान भी ऐसा ही प्रकाश देते हैं, ऐसी ही ऊष्मा प्रदान करते रहते हैं। सूर्य का प्रकाश न हो तो संसार का विनाश हो जाए। संसार कायम है, वो सूर्य के कारण है। इसी तरह, सच्चे जिज्ञासु में भी उदारता होनी चाहिए। बिना प्रयास के उसका सहज स्वभाव होना चाहिए। कोई उससे दुश्मनी करता है, वो उसके पांव पकड़ता है, वो उसको सुख पहुँचाता है। शेख़ फ़रीद कहते हैं जो तुम्हें गाली देते हैं, तुम उसके घर जाओ उसके घर जाकर उसके पांव दबाओ। ये साधना केवल आँख बंद करना नहीं है। आँख बन्द करना तो पहली कक्षा है। हम लोग काफी आगे बढ़ चुके हैं। सोचना चाहिए, स्वनिरीक्षण करना चाहिए कि हममें क्या परिवर्तन आया है अब तक? क्या हमारा स्वभाव नदी की तरह हो गया है? क्या हम जीव, दानी सूर्य भगवान जैसे बन गए? मंजिल बहुत

Scanned by CamScanner

दूर है। अभी कुछ भी नहीं हुआ। भाई लोग कहते हैं – "मेरा मन नहीं लगता।" सच कहते हैं वो झूठ नहीं कहते हैं। परन्तु हमने अभी तक ईश्वर के गुणों को अपनाया नहीं है। पूज्य गुरुदेव बेशक जिज्ञासु के गुणों के वर्णन कर रहे हैं, वास्तव में ये परमात्मा के ही गुण हैं और परमात्मा की ही कृपा से, सच्चे जिज्ञासु में वो गणु, जब तक नहीं आते, तब तक वो अधिकारी नहीं बनता है। "ब्रह्मज्ञानी पर-उपकार" वो उसके भीतर में उमंग होती है कि किस तरह दूसरे का भला करे। उसका सहज-स्वभाव होता है। वो बन कर नहीं करता ऐसा वो उसकी वृत्ति है। जैसे नदी, वो अपने-आप, जान-बूझकर नहीं करता है। इसी तरह सहज-स्थिति जिज्ञासु की बन जाए। तो पहला गुण बताया है नदी का। दूसरा बताया है सूर्य का।

तीसरा बताया है धरती का। जिज्ञासु में सहनशीलता होनी चाहिए, धरती के समान। ब्रह्मज्ञानी के प्रति लिखा है कि ब्रह्मज्ञानी का भी ऐसा सवभाव होता है जैसे धरती का। बड़ी सहनशीलता है। हम किस प्रकार के जूते पहन कर चलते हैं, धरती कुछ नहीं कहती, हम गंदगी डालते हैं, धरती रोती नहीं, पाँव डालते हैं, ध रती रोती नहीं। ये धरती का जो स्वभाव है, महान, ऊँचे से ऊँचे ज्ञानियों का स्वभाव है। "ब्रह्मज्ञानी का एक नाम, जो धरती का सहज-स्वभाव"। धरती और अग्नि का सहज स्वभाव है। बड़ा कठिन है। हमें कोई जरा सी बात कह देता है आग लग जाती है। ये साधना नहीं है। हमें ये अभ्यास करना होगा, कोई हमारे पर पत्थर फेंकता है, हमें गाली देता है, लड़ाई करता है, हमारे में सहनशीलता होनी चाहिए। हमारे देश में स्त्री की और धरती

Scanned by CamScanner

की, इन दोनों की पूजा की जाती है क्योंकि दोनों में यही गुण है, सहनशीलता है। पुरुषों में सहनशीलता बहुत कम है। वर्तमान में, बहनें क्षमा करेंगी, वो अपने गुणों को भूलती चली जा रही हैं और नई, पश्चिम की जो संस्कृति आ रही है, उससे प्रभावित होती जा रही हैं। हमारा जो स्वरूप था ईश्वरीय था। हमें माता कहा जाता था। गुणों के कारण, माँ रूप करके हमारी पूजा होती थी। और वो माँ आज कहती है, मेरा भी समाज में कोई स्थान है। अपने महान गुण को छोड़कर, छोटी सी संकीर्णता 'नैरो माईडेडनेस (Narrow mindedness) की ओर बढ़ रही हैं बहनें। बुरा मत मानिये। यहाँ प्रत्येक स्त्री माँ रूप थी पूजा होती थी, मन्दिरों में, गुरुद्वारों में, सब जगह, घर में तो होती ही थी। उनका दोष नहीं है, ये सभ्यता का प्रभाव इतने जोर, इतने वेग से, आ रहा है कि हम अपने गुणों को जो ईश्वरीय गुण हैं, ईश्वर की समीपता है हमारे में, हम उसको कूड़े-करकट में फेंक रहे है। सच्चे जिज्ञासु के भीतर में, पूज्य गुरुदेव कह रहे हैं कि तीन गुण होने चाहिए, नदी की तरह दूसरे की सेवा करें, सूर्य की तरह दूसरों को लाभ पहुँचाये, उनको जीवन दान देना, धरती की तरह सहनशीलता, सहनशीलता, सहनशीलता। बिना गुणों के भक्ति नहीं होती। भक्ति के अर्थ हैं, चाहे ज्ञान की साधना करें, चाहे प्रेम की साधना करें, बिना गुणों के कोई भी, किसी प्रकार की भी साधना सफल नहीं हो सकती। यहाँ भक्ति के अर्थ हैं, साधना। "बिन गुण कीते भक्ति न होय।" इतने ऊँचे गुण होने चाहिए तब हम अधिकारी बनते हैं। आज सुबह किताब खोली, मेरी आँख चौंधियाने लगीं कि ये क्या लिखा है। अपने आपको स्वनिरीक्षण करके

Scanned by CamScanner

देखा, ये तो बिल्कुल कोरा है, कोरा ही कोरा। कहाँ गुण है वो धरती में जैसा, कौन सा गुण है नदी जैसा, कौन सा गुण है सूर्य जैसा। भगवान कृष्ण भी गीता में सूर्य का ही उदाहरण देते हैं, अर्जुन को। तू कर्म कर जैसे सूर्य भगवान भी करते हैं, मैं भी कर्म करता हूँ। मुझे यह कर्म का फल नहीं लगता है। सूर्य भगवान भी इतनी सेवा करते हैं, इतने कर्म करते हैं, उनका भी कर्म का फल नहीं लगता है। तू भी कर्म कर, परन्तु कर्म के फल की आशा मत रख। आशा कर्म के फल का प्रभाव तुम्हारे ऊपर नहीं पड़ना चाहिए। बुरा हो चाहे भला हो। ये जीवन की एक साधना है। हम जो भी कर्म करते हैं आशा रख के करते हैं। किसी ने अच्छी बात कही, प्रसन्न हो जाते हैं, किसी ने गलत बात कह दी, अयोग्य बात कह दी, तुरन्त गुस्सा आ जाता है। ये तो साधना नहीं है। अभी हमारी मंजिल बहुत दूर है। घबरायें नहीं, चलते जाइये, चलते जाइये। परन्तु आदर्श हम सबको यही रखने होंगे। ये स्थिति जब ईश्वर के पास से आ जाती है तब परमात्मा का मिलन, सच्चे पति के मिलन, सच्ची माँ के दर्शन तुरन्त हो जाते है। अब भी चित्त में बड़ी मलीनता है, बड़ी मलीनता है। कठोरता है, बड़ी कठोरता है। मुलायमियत नहीं है, दीनता नहीं है। लोग-बाग समझते हैं आँखें बन्द कर ली यही काफी है, नहीं। मैं ये बार-बार कहता हूँ सतगुणों को अपनाएं। जब तक सतगुणों को नहीं अपनायेंगे, सत्गति नहीं आएगी, मन में कोमलता नहीं आएगी। कोमल मन स्थिर हो सकता है, स्थूल मन स्थिर नहीं होता। ये कोमल होकर ही आत्मदेश में प्रवेश पा सकता है उससे पहले नहीं। ये अधिकारी तब तक नहीं हो सकता है, जब तक इसमें

Scanned by CamScanner

कोमलता नहीं आती, पुष्प की तरह इसको खिलना चाहिए, अप्रयास सबको ही सुगन्धि प्रदान करनी चाहिए, जिव्हा में, वाणी में कठोरता नहीं आनी चाहिए, कठोरता तो होनी ही नहीं चाहिए, व्यवहार में जैसे पूज्य गुरु महाराज ने फरमाया है, नदी की तरह दीनता, सबकी सेवा करना, सूर्य की तरह सबको ऊष्मा, सबको जीवन प्रदान करना और संसार में रहकर दुख–सुख, दूसरों की बातें, सबको सहन करना। आज तीन बातों पर ही मनन करें, घर जाके और आगे के लिए प्रयास करें। मुझे आशा है, विश्वास है कि आप लोग भूलेंगे नहीं इन तीन बातों में, इनमें कितनी परिपक्वता आएगी, देर लगेगी, चिन्ता मत करिये, कोई आपसे बुरा–भला नहीं करेगा, परन्तु अभ्यास आज से ही शुरु कर दीजिए। मैं पिछले महीनों से, कई महीनों से बार–बार कहता आ रहा हूं कि परिवार में एक–दूसरे से सहयोग होना चाहिए जो व्यक्ति परिवार में सफल हो जाता है वो संसार में भी सफल हो जाता और परमात्मा के पद पर भी सफल हो जाता है। ये पूज्य महाराज ने जो लिखे हैं तीन गुण, ये प्रेमी भाइयों के लिए, परिवारिक जीवन जो व्यतीत करते हैं, विशेषकर उनके लिए लिखे हैं। मुझे आशा है कि आप इन गुणों को अपनाकर मुझे अपना आभारी बनायेंगे। गुरुदेव आप सबका भला करें।

●●●

Scanned by CamScanner

आदर्श जीवन

"हर परमार्थी को स्वाध्याय करना चाहिए। अपने अन्तर में कोई कमजोरी देखें तो उसे दृढ़ता से त्यागने का प्रयत्न करना चाहिए। जैसे अधिक बोलना, अधिक खाना, दूसरों की बातों में हस्तक्षेप करना आदि। ये ऐसी बातें हैं, अगर मनुष्य चाहे तो कुछ समय के प्रयास से इनसे मुक्त हो सकता है। इसके पश्चात् जो और कठिन त्रुटियाँ हैं, जैसे काम, क्रोध, अहंकार आदि इनको धीरे-धीरे छोड़ने का प्रयास करना चाहिए। यदि आरंभ में ही कठिन त्रुटियों से मुक्त होने का प्रयास किया जाएगा तो परमार्थी को निराशा होगी क्योंकि काम, क्रोध, अहंकार आदि ऐसी बाते हैं जिनसे मुक्त होने के लिए काफी समय तक दृढ़ प्रयास की आवश्यकता है। इसीलिए आरम्भ में उस त्रुटि से मुक्त होने के लिए प्रयास करना चाहिए, जो सरलता से छूट जाए। ऐसा करने से मनुष्य को उत्साह मिलेगा। दृढ़ता आएगी तथा उसमें कठिन बुराइयों से मुक्त होने के लिए साहस बढ़ेगा।"

गुरुदेव के पवित्र शब्द अति महत्वपूर्ण हैं। इस सब यही समझते हैं कि प्रातः सायं 10-15 मिनट बैठे, परमात्मा का नाम लिया, यही वास्तव में पूजा है। ऐसा नहीं है। वास्तव में हमारा जीवन ही पूजा का रुप होना चाहिए। 24 घंटा का जो जीवन है वो पूजा का रुप होना चाहिए। इस समय अपने देश में स्थिति को देखें, कितना भी व्यक्ति सात्विक है, ईश्वर की पूजा करता

Scanned by CamScanner

है, महापुरुषों के चरणों में जाता है, तब भी उसको सात्विक भोजन प्राप्त नहीं होता है। उसकी कमाई सात्विक नहीं है। झूठ–सच से पैसा कमाता है व्यक्ति। झूठ–सच के बिना इस वक्त, इस देश में कमाई करना अति कठिन है। इसके अतिरिक्त साधना के अर्थ है, मन को साधना। मन के साधे सब सधे। हम मन को साधने के लिए दिन में 5 मिनट भी नहीं लगाते। मन को साधने का मतलब ये है, मन को ईश्वर जैसा बनाना है। ''तत्वमसि''। ऐ मनुष्य तू कहाँ कीचड़ में फँसा हुआ है। तू तो ईश्वर रूप है, ईश्वर ही है। तेरे कर्म, तेरी वाणी, तेरा व्यवहार सब ईश्वर जैसा होना चाहिए। ईश्वर नहीं दिखता है, तो ईश्वर जैसे महापुरुष तो दिखते हैं, उनके जीवन का अनुसरण करना चाहिए। वो भी नहीं कर सकते तो अपने माता–पिता के जीवन का अनुसरण करना चाहिए। वो भी नही कर सकते, स्कूल में पढ्ते हैं, जो अध्यापक पढाएं, उसके जीवन का, उसके आदेशों का पालन करें। मगर खेद है हम सब चोर हैं। कोई इस तरफ ध्यान नहीं दे रहा है। माफ करें, मैं जो कुछ कह रहा हूँ। क्योंकि परिस्थितियां ही ऐसी हैं कि हम करना भी चाहें तो सफलता दूर है, हमें सफलता प्राप्त नही हो पा रही है। जब तक सदगुणों को नहीं अपनायेंगे, जब तक जीवन में कोमलता नही आएगी। जब तक हमारा भोजन सात्विक नहीं होगा। सच्ची कमाई का नहीं होगा, भले ही हम औरंगज़ेब को बुरा कहें, या औरंगज़ेब जैसे और भी बादशाह हुए हैं, मुसलमान हुए, हिन्दू हुए, वो भोजन अपनी कमाई से जो पैसा आता था, उस पैसे से भोजन प्राप्त करते थे, और भोजन परिवार के सदस्य धर्मपत्नी द्वारा बनाके खाते थे, जैसे अन्न वैसा मन, यदि अन्न में सच्चाई नहीं है, यदि

Scanned by CamScanner

अन्न कोमल बुद्धि से नहीं कमाया गया है, अन्न दूसरे की सेवा करके नहीं बनाया गया है, उस अन्न के खाने से पेट भले ही भर जाए, परन्तु आपका आचार–व्यवहार पवित्र नहीं होगा। किसी भी व्यक्ति का अन्न सात्विक नहीं है। किसी भी। माफ करेंगे, कुछ लोग बैठे होंगे, डाक्टर का पेशा सन्यासियों का पेशा कहा गया है, संतों का पेशा कहा गया है। आज मार्केट में देखें कि डाक्टर क्या कर रहे हैं। बाकी लोगों को तो छोड़िये, ये संत कहलाते है, हमारे शास्त्रों में डाक्टर को संत कहा गया है। कई परिस्थितियों में डाक्टर संत से भी ऊँचा है क्योंकि वो दूसरे के जीवन को बचाता है। यहाँ तक कि डाक्टर अपना रक्त भी देता है, मरीज के लिए, अपनी जेब खाली कर देता है, भूखा रह जाता है, मगर मरीज के दुख को वो बरदाश्त नहीं कर सकता। ये हमारी संस्कृति रही है। आज कल तो, कितना शोषण हो रहा है मार्केट में। इसी तरह अन्य पेशे के भी जो लोग हैं उनकी स्थिति भी बहुत गंदी है। झूठ तो एक हिस्सा बन गया है, हमारा एक रुटीन बन गया है। बुरा तो हम मानते नहीं। भीतर से आवाज आती है उसके लिए कान बहरे हो गये हैं। भीतर की आवाज को तो हमारे कान सुनते नहीं, कान बहरे हो गये हैं। हम सब कहते हैं कि साहब हमारा मन नहीं लगता। मन कहाँ से लगेगा।

जैसा अन्न वैसा मन, बेसिक चीज जो है सबका आधार अन्न है। इस अन्न को कमाने के लिए, आजकल क्या हो रहा है? हम सब चोर हैं। मैं भी इन बातों से गुजरा हूँ तो परमात्मा मिलना सरल नहीं है जितना हमने समझ रखा है। यहाँ तक कि संत अपने–आपको कहलाते हैं। जो नग्न रहते हैं। वो

Scanned by CamScanner

भी नहीं बचते हैं। किसी को सात्विक अन्न प्राप्त नहीं होता। आप देखते हैं, दिल्ली में, लाखों की संख्या में महापुरुषों के प्रवचन सुनने जाते हैं। क्या आप समझते हैं कि सारे ही सात्विक हैं। प्रवचन देने वाले मानते हैं कि हम चोर हैं। सुनने वाले (organisation) करने वाले, सभी वही हैं। सब मिली भगत है। तो पूज्य महाराज जी कह रहे हैं कि ईश्वर के रास्ते पर चलना है। उसके लिए आपको गीता के उपदेश का अनुसरण करना पड़ेगा, पहले तामसी गुणों का परित्याग करना होगा, फिर राजसी, फिर सात्विक, फिर गुणातीत बनना होगा। आत्मस्वरूप बनना होगा। आत्मा ही परमात्मा के समीप हो सकती है। ये दोष किसी एक व्यक्ति का नहीं है। सभी चोर हैं। हम सब पाठ–पूजा करते हैं, ये दोष किसी एक व्यक्ति का नहीं है, सभी चोर हैं। परन्तु हमारा व्यवहार, हमारे विचार, हमारी वाणी, सब दूषित हैं। पूज्य गुरुदेव प्रेरणा दे रहे हैं कि मनन करें, जो और छोटी–छोटी बुराइयाँ हैं वो कहीं लिख लें। पहले उनसे मुक्त होने की कोशिश करें। जैसे आपकी वाणी में कड़वापन है, उसका परित्याग करें। झूठ बोलने की आदत है, ये बड़ा कठिन रोग है। हमारा सारा वयवहार ही पूरा झूठा हो गया है। पुरातन संस्कृति में इसका इतना महत्व नहीं दिया जाता था, बहुत साधारण अवगुण माना जाता था। उसी तरह महापुरुष भी बोल देते हैं, परन्तु झूठ तो बहुत ही गन्दी आदत है, हमारी हो गई। बिजनेसमैन है तो वो झूठ बोलता है, सरकारी नौकर है तो वो झूठ बोलता है और कई प्रोफेशन हैं मुझे कहना नहीं चाहिए। सब झूठ पर ही टिके हैं। सब यही कहते है जीवन का अंग बन गया है, क्या करें। कोई भी व्यक्ति भूखा रहने के लिए तैयार नहीं है। जो सात्विक कर्मो को अपनाएगा,

Scanned by CamScanner

वो पेट भर के रोटी नहीं खा सकता है आजकल। तब भी पूज्य गुरु महाराज के आदेश को गंभीरता से समझें कि पहले उन बुराईयों से मुक्त होने की कोशिश करें जो साधारण हैं। किसी से रूखा बोलना ये सब छोड़िये। अपने आपको बड़ा समझना दूसरे का शोषण करना, आदि पहले इनसे मुक्त होने की कोशिश करें। जब इन पर विजय प्राप्त कर लेंगे तो जो बहुत ही गंदी बुराइयां हैं जैसे किसी का कत्ल कर देना, किसी का शोषण करना, अधिक झूठ बोलना, चोरी करना, उनसे मुक्त होने की कोशिश करना और साथ ही साथ सात्विक गुणों को, सच्चाई को, आत्मिक गुणों को, उनको अपनाने की कोशिश करते रहें। बिन गुण कीते भक्ति न होय। जब तक ईश्वरीय गुणों को नहीं अपनाएंगे तब तक साधना में सफलता नहीं मिलेगी। दो–तीन शब्दों में इनको विस्तार से कहा जा सकता है कि इनका भाव ये है।

'तू तू करता तू भया मुझमें रही न हूँ।
आपा परका मिट गया, जत देखा तत तू।।

ईश्वर के गुणों को ही अपनाना होगा। ईश्वर के स्वरूप को ही अपनाना होगा। ईश्वर जैसा ही बनना होगा। जब तक ऐसा नहीं करेंगे, जितनी मर्जी आप साधना करते रहें। जितनी आप आशा रख रहे हैं, निराशा में ही बदल जाएगी। बहुत सारे भाई लोग हैं। मैं भी हूँ। कई वर्षो से हम साधना कर रहे हैं जितनी गुरु महाराज हमसे आशा रखते थे या हम अपने मन में आशा रखते थे वो स्थिति अब तक नहीं आई है। एक हमारी स्थिति नहीं है, पिछले कई युगों से चली आ रही है। सर्वश्रेष्ठ योनि मानी गई है, मनुष्य की। बुद्धि भी उसको दी है, ज्ञान–अज्ञान में अन्तर देखना, ये सब अच्छे सदगुण दिए है मनुष्य को, परन्तु खेद की

Scanned by CamScanner

बात है कि मनुष्य ईश्वर जैसा नहीं बन पा रहा है। और जब तक ईश्वर जैसा नहीं बन पायेगा, ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती। साधना करने के लिए है ? साधना का अर्थ है मन को साधना। मन को साधने का मतलब ये है कि इसको ईश्वर जैसा बनाना है। जल ही जल में मिल सकता है। आत्मा ही परमात्मा में एक हो सकती है। ये शरीर, ये गंदा मन, ये ईश्वर जैसा नहीं बन सकता है। आत्मा ही परमात्मा में एक हो सकती है। जब तक ऐसा नहीं बनेगा, ये मन, तो जन्म–मरण के चक्कर में फँसा रहेगा। ये झूठ ही है, इसको हम अभी तक नहीं छोड़ पा रहे हैं। हम मजबूर हैं। एक आदमी एक बड़ी कम्पनी में या साहूकार के पास काम करता है। उसको 10–20 हजार रुपये वेतन भी मिलता है। वो सोचता है कि बड़ा लक्की हूँ। परन्तु वहाँ तो झूठ बोलना पड़ता है। तो विवश है। वो भक्त भी है। बुरे कर्म करना भी नहीं चाहता परन्तु वेतन पाने के लिए जैसा मालिक उसका कहता है, उसे वैसा करना पड़ता है। ये एक व्यक्ति का दोष नहीं, हम सब चोर है, सब करते हैं। ये तो साधारण अवगुण बताये हैं गुरु महाराज जी ने। आगे चल के और विशेष बातें बताई हैं कि उनका परित्याग करने का प्रयास करें। पहले सरल बातों को छोड़े, उसके बाद कठिन बातों को छोड़े तब जाके ये रास्ता सरल बनेगा, अभी रास्ता चल रहे है फिर आगे चल के तो केवल आत्मिकता को ही अपनाना है। विचार भी आत्मिकता का हो, व्यवहार भी आत्मिकता का हो। हमारा रहना सहना भी जो है वो भी आत्मिकता का हो। जैसे ईश्वर रहते हैं, जैसे ईश्वर व्यवहार करते है, वैसे हमें करना होगा। हमारे जीवन का लक्ष्य ईश्वर बनना है, इससे कम नहीं। ईश्वर के दर्शन करने हैं, ईश्वर

Scanned by CamScanner

के दर्शन तभी होंगे जब हम ईश्वर बन जायेंगे उससे पहले नहीं हो सकता। एक झलक मिल सकती है। आसमान में बिजली गिरती है, एक-आध सैकिण्ड के लिए, दो चार सैकेण्ड के लिए। हमेशा बिजली नहीं गिरती रहती। ईश्वर की प्राप्ति के लिए ईश्वर बनना पड़ेगा, और वो शुरु होता है मन के साधने से, मन के साधे सब सधे।

गीता का उपदेश समझना चाहिए और भी पुस्तकें हैं, और भी शास्त्र हैं, प्रेरणा देते हैं। परन्तु गीता का उपदेश प्रैक्टिकल है, व्यवहारिक है, ये बार-बार पढ़ना चाहिए। पहले दो अध्याय, पहले अध्याय को छोड़कर दूसरे अध्याय के अन्तिम श्लोक जो हैं वो बड़े ही प्रेरणादायक हैं। क्रोध क्यों आता है ? कैसे आता है ? क्रोध से कैसे बचें ? उसमें बताया गया है। फिर तीसरा, चौथा, पाँचवा कर्म योग है, प्रत्येक व्यक्ति व्यवहार करता है। कर्म तो करता ही है कोई कर्म से बच नहीं सकता है। कर्म भी करें और कर्म फल से मुक्त भी होते चले जाएं और ईश्वर की तरफ भी बढ़ते चले जाएं। धीरे-धीरे ईश्वर की चरण रज लेते हुए ईश्वर जैसे बन जाएं। ये तीन अध्यायों में बताया गया है कि ईश्वर बनना है जो शब्द गुरु महाराज कह रहे हैं वे भगवान श्रीकृष्ण की प्रेरणा से उन्होंने लिखें हैं वे गीता पढ़ा रहे हैं। हम नॉविल पढ़ते हैं और कई किस्म की पुस्तकें पढ़ते हैं। परन्तु अपने जीवन को ईश्वर जैसा बनाने के लिए, वो कर्मयोग इतना कठिन है कि प्रत्येक व्यक्ति नहीं कर सकता है। संक्षिप्त में ये है 'कर्म करत होय निष्कामी'। महापुरुष कहते हैं कि कर्म तो सभी करेंगे, उससे कोई बच नहीं सकता, परन्तु कर्म करते हुए कर्म के साथ आसक्ति न रहे। कर्म फल के साथ आसक्ति न रहे, किसी प्रकार की

Scanned by CamScanner

आशा न रहे। और आशा रखेंगे तो निराशा भी होगी। ये सब बातें बताई हैं। कर्म तो करना पड़ेगा परन्तु कर्म और कर्म फल से हम मुक्त रहें। अर्थात् हमारी आत्मा, परमात्मा भीतर में प्रकाशित होती रहे। भीतर में भगवान सूर्य, सूर्य के रूप में बैठे हुए, आत्मा के रूप में बैठे हुए, हमारे जीवन में 24 घंटे प्रकाशित होते रहें। व्यक्ति को भी प्रसन्नता, आनंद मिले और उसके व्यवहार द्वारा दूसरों को भी आनंद मिले। आनंद का मतलब आत्मिक आनंद मिले। हमारा जीवन तो दिखावटी हो गया है, व्यवहारिक जीवन नहीं है। भाई-भाई में प्रेम नहीं है, पति-पत्नी में प्रेम नहीं है, ये नजदीकी रिश्तेदार हैं, पिता-पुत्र में प्रेम नहीं है। आप जा के कचहरी में देखो, मुकदमे अधिकांश किनके होते हैं। इन्हीं नजदीकी रिश्तेदारों के होते हैं। दूर के रिश्तेदारों से मुकद्में ज्यादा नहीं होते, परिवार के लोग ही कचहरियों में जाते हैं। उनमें भी जो नजदीकी संबंधी होते हैं, वो ही जाते हैं। हमारा जीवन बहुत ही दूषित, बहुत ही गंदा हो गया है। कई महापुरुषों ने जीवन में रहते हुए, कि जीवन जीना बहुत कठिन है, साथ ही प्रेरणा भी दी है, अपने जीवन द्वारा। ठीक है, कर्म करो, दूसरा आपको दुख देगा, आपका क्या करना है? दुख के बदले दूसरों को सुख पहुँचाना है। ये साधक का काम है। साधारण व्यक्ति का काम नहीं, मैं कह रहा हूँ। जो अपने-आपको साधक कहते हैं, गुरु का शिष्य कहते हैं या जो गुरु बने बैठे हैं वो कहते हैं। ऐसी बातें उन्हें करनी हैं। इस जीवन पर फरीद जी ने बहुत अच्छे श्लोक लिखे हैं। उनमें खूबी थी। उनके श्लोकों में इस सुन्दरता को देखकर पाँचवें गुरु ने ग्रंथ साहब में एक मुसलमान फकीर की वाणी को संकलित किया है। गुरु महाराज की वाणी और नौ

Scanned by CamScanner

गुरु, नौ गुरुओं की वाणी में है, उनके यहाँ से अपने प्रेम द्वारा हिन्दुओं को जितना कनवर्शन किया, और जितने हिन्दुओं को मुसलमान बनाया उतना औरंगजेब ने तलवार द्वारा नहीं बनाया। तभी हम उसकी वाणी के आगे सिर झुकाते हैं। क्योंकि उस वाणी में प्रेरणा है। व्यवहारिक प्रेरणा है उसकी। जो तेरे से बुरा करता है उसका भला करो। जो तुम्हें हाथ से पीटते हैं, उसको कसकर मत पीटो, उनके घर जाकर उसके पाँव चूमो। एक मुसलमान फकीर कह रहा है और हम उसकी पूजा करते हैं। और एक–दो शब्द नहीं है। काफी वाणी उनकी हैं जो संकलित है। सच्चाई–सच्चाई है और उसके आगे कौन कह सकता है कि मुसलमान की वाणी है, मुसलमान ने कहा है, हम हिन्दु हैं, सिक्ख हैं। हम क्यों माने पर सच्चाई तो मानना पड़ेगा। ये गुरुग्रंथ साहब की जो संकलित वाणी है बड़ी विचित्र है। गुरु साहिबों की जो वाणी है, शेख फरीद की वाणी है, कबीर साहिब की वाणी है। कबीर साहब की इतनी वाणी है कि कबीर साहब के अपने ग्रंथों में संकलित नहीं है। नामदेव जी की, रविदास जी की, यानि भारत में एकता का स्वरूप है। ये हमारे देश का दुर्भाग्य रहा है कि सच्चाई को कोई नहीं पकड़ता। तो गुरु महाराज जी प्रेरणा दे रहे हैं कि पहले साधारण त्रुटियों का परित्याग करने का प्रयास करो उनमें सफलता मिल जाए, तो उनसे जो कठिन बुराइयां है, त्रुटियाँ हैं उनको दूर करो, उनसे मुक्त होंने की कोशिश करो। जब तक अपनी त्रुटियों से मुक्त नहीं होंगे, आपकी साधना में कोई सफलता नहीं आएगी। सफलता का अर्थ है कि आपको मुक्त होना है, जन्म–मरण के चक्कर से मुक्त होना है। वो स्टेज नहीं आएगी जब तक आपका चित्त निर्मल नहीं हो जाएगा, आपका जीवन ईश्वरमय नहीं हो

Scanned by CamScanner

जाएगा, आपका व्यवहार ईश्वर जैसा नहीं हो जाएगा। आप में ईश्वर के गुण नहीं आ जाएंगे। जल में जल ही मिल सकता है। ईश्वर में ईश्वर ही मिल सकता है। हम सब को ईश्वर बनना पड़ेगा। ये यात्रा बहुत लम्बी है, घबराना नहीं चाहिए, इसलिए इसको साधना कहते हैं। इस साधना की सफलता में चाहे एक जन्म नहीं कई जन्म लग जाएं चिन्ता नहीं करनी चाहिए। चलते रहना चाहिए। इसलिए महापुरुष कहते है –

''बहुत जन्म बीते थे, माधो,
ये जन्म तुम्हारे लेखे।''

कई जन्म हो गए हैं – हे प्रभु, आपके रास्ते पर चलते हुए, सफलता नहीं मिली। अब मैं तन, मन, धन से अपने आपको समर्पित करता हूँ। मुझे शक्ति दो कि मैं आप जैसा बन जाऊँ। अपने जीवन के प्रति, प्रत्येक व्यक्ति को अति गम्भीर होना चाहिए। ये जन्म बार-बार नहीं मिलता है। मैंने जैसे पहले कहा, बहुत कठिन है। देश की परिस्थितियां ऐसी बन गई है कि हम चाहते हुए भी सफलता से दूर है। बुरे कर्म हो जाते हैं, बुरे विचार आते रहते हैं, बुरी बाणी निकलती है। वास्तव में हम बुराई के प्रतीक हैं, नेकी के प्रतीक नहीं हैं, आत्मा के प्रतीक नहीं हैं। हमारे कर्म, हमारे विचार, हमारी वाणी, हमारा भोजन, हमारा व्यवहार सब दूषित हैं। और जो भी कर्म करते हैं कर्म और कर्मफल की स्मृति बनी रहती है, वो बड़ा पाप है। महापुरुषों ने प्रेरणा दी है कि कर्म और कर्मफल दोनों को सागर में डुबो दो, उसकी याद नहीं रहनी चाहिए। हमारी याद बनी रहती है। बुराइयों

Scanned by CamScanner

की याद है। भगवान की याद नहीं। इस स्मृति को पवित्र करने के लिए कठोर तपस्या की आवश्यकता है। यज्ञ करना, यज्ञ का मतलब होता है कुर्बानी करना, बलिदान देना। अपने अहंकार का बलिदान देने की जरूरत है। हम बकरे का बलिदान दे देते हैं। हमने समझ लिया, हमने बहुत कुछ किया। इस बकरे की जो गर्दन है इसका बलिदान देना है इस अहंकार का बलिदान देना है। हम दे नहीं पा रहे हैं, जीवन को गंभीर बनाएं। चाहे किसी आयु के आप हों। गंभीरता का अभ्यास करें, अपने जीवन के लक्ष्य के प्रति। भविष्य तभी सुन्दर होगा जब वर्तमान सुन्दर बनेगा। अतीत को पूर्णतः भूल जाएंगे। परमात्मा सदा वर्तमान में रहते हैं। भगवान शिव की मूर्ति इसी वर्तमान की प्रतीक है, इसी तरफ हमें प्रेरणा देती है। आत्म–स्थिर जब व्यक्ति होता है, वहाँ वर्तमान ही होता है। वहाँ अतीत और भविष्य नहीं होता है। मैं कुछ अयोग्य शब्द कह गया हूँ तो आप मुझें क्षमा करेंगे। परन्तु मैंने जो कुछ भी कहा है अपने–आपको सम्मुख रखते हुए कहा है। आप में से किसी व्यक्ति की प्रतिक्रिया करने की कोशिश नहीं की। मैं अपने जीवन के प्रति ही कह रहा हूँ। और मैं अभी तक सफलता से दूर हूँ महापुरुष भी यही कहते हैं –

''कह नानक मैं ना ही कोउ
गुण, राख लेयों सरनाई।''

वो कहते है कि मैं गुणों का भण्डार कहूँ, अहंकार ही यही हैं 'असी खत्ते कमाऊंदे''। खत्ते फारसी का शब्द है, कसूर करते हैं, पाप करते हैं, ''अस्सी खत्ते बहुत कमाऊंदे किधु अंत न पारावार।''

Scanned by CamScanner

उसका कोई अंत ही नहीं है। ये महापुरुष अपने लिए कहते हैं। और कोई साधन नहीं है। प्रभु से प्रार्थना करते हैं, हे प्रभु, हमें बख़्श दो। हम पर कृपा कर दो। हमें क्षमा कर दो, हम पापी हैं, गुनेहगार हैं। हम इस बिना पर कि हम इतने पाठ करते हैं, इतनी पूजा करते हैं, वो कुछ नहीं होना। उसका विशेष महत्व नहीं है। मै बार-बार करबद्ध प्रार्थना कर रहा हूँ आप के चरणों में कि अपने प्रति गंभीर बनें। कठिनाइयां आएंगी। रास्ते में और हैं, बहुत कठिनाइयां हैं, मनुष्य के सामने। यदि गंभीरता से सोचेंगें और खास कर जब भोजन खाने बैठेंगे तो आप भोजन नहीं खा सकेंगे कि मैं इतना पापी हूँ, इतनी पाप की कमाई का भोजन खा रहा हूँ। गंभीर बनें अपने प्रति।

●●●

Scanned by CamScanner

भगवान कृष्ण की जीवनलीला और गीता का उपदेश

हमारे सर्व–कला सम्पन्न और प्रमुख लीला–निधान कृष्ण भगवान का जन्मदिन आया है। सारा देश बड़े उत्साह के साथ उनका जन्मदिन मनाता है। परन्तु उनकी लीलाओं का हमें रोचक और मनोरंजक पक्ष ही नहीं देखना है, अपितु उनमें झलकता हुआ आध्यात्मिक सार ग्रहण करना चाहिये।

वैसे तो रिवाज है कि रात में कृष्ण जी के जन्म के पश्चात् आरती कर के एक बजे व्रत तोड़ते हैं जो सुबह भोर में ही शुरू किया जाता है। ऐसी परम्परा में भाव तो है परंतु लोक दिखावे वाला भाव नहीं होना चाहिये। उस सांवले के लिए व्याकुलता होनी चाहिए। उसे जन्म लेने की जरूरत नहीं है। न उसकी मृत्यु होती है न कभी उसका जन्म होता है।

ये ठीक है कि देश उनका जन्मदिवस मनाता है, मनाना भी चाहिए। सामान्य लोगों के लिए जो प्रथा है, बहुत सुन्दर है। प्रत्येक–परिवार में भी अर्पण करने के लिये पकवान–मिठाई बनती हैं, श्रीकृष्ण के जीवन की झाँकियां सजती हैं, उत्साह के साथ कीर्तन पूजा होती है, तब उसके बाद व्रत तोड़ा जाता है। इससे सांस्कृतिक उत्साह उत्पन्न होता है। परंतु भगवान तो अजन्मा और अमर है – सब साधकों को ज्ञात है।

Scanned by CamScanner

आध्यात्मिकता के आयाम में प्रविष्ट हुए साधकों के लिये तो इसका भाव यह है कि व्रत तब तोड़ना चाहिये जब भगवान के सचमुच दर्शन हो जायें, भगवान हमारा दूध स्वीकार कर लें, हमारी भक्ति के फूल या प्रसाद जो हम अर्पण करते हैं स्वीकार कर लें और हमारा उद्धार हो जाये।

हमारी संस्कृति में भगवान राम और कृष्ण का विशेष स्थान है। भगवान राम का मर्यादा पुरुषोत्तम के आदर्श रूप में, परन्तु सांसारिक लीला में जो स्थान भगवान कृष्ण का है वो आज तक न किसी का हुआ और मेरे विचार में न होगा। जेल में जन्म से लेकर जिस वक्त वे देवकी जी के उदर से प्रकट होकर यशोदा जी के पास पहुँचे है तभी से विचित्र करामातें दिखानी शुरू कर दी थीं। यशोदा को भी मालूम नहीं हुआ कि कृष्ण मेरा बेटा है, देवकी जी को थोड़ा-थोड़ा भान हुआ। ये विचित्र लीला है जिसमें छिपा एक महान दर्शन है।

जो ज्ञानी पुरुष हैं वो समझते हैं इस दर्शन को, हम तो इसे केवल एक पौराणिक गाथा की परम्परा या टी.वी. का ड्रामा समझते हैं। कृष्ण भगवान का सीरियल रामानंद सागर दिखाते रहे हैं तो हम देख-देख के समझते हैं कि ये अच्छा मनोरंजन है। परन्तु उसके पीछे जो वास्तविकता है वो हम समझने की कोशिश नहीं करते। उस विचित्र लीला को देखकर हमारे भीतर में भक्ति का उन्माद उत्पन्न नहीं होता, प्रेम का विस्माद नहीं होता। भक्त भगवान के चरणों में प्रार्थना करता है कि अपने दर्शनों से मुझे कृतार्थ करो। हम सब प्रार्थना करते हैं, कई लोग

Scanned by CamScanner

प्रेमाश्रु भी बहाते हैं, व्रत रखते हैं तथा अन्य अनेक प्रकार की उपासना करते हैं।

श्री कृष्ण भगवान की कुछ लीलाएं

भगवान की भी कैसी विचित्र लीला है कि बालक कृष्ण को रस्सियों से बाँध दिया जाता है, छड़ी से पीटा जाता है और वह कह रहे हैं – ***"मैया मेरी, मैं नहीं माखन खायो।"*** माता कहती है – "मुँह खोल, तूने खाया है, मैंने देखा है।" बालक लाड़ भरी मार खाकर मुँह खोलता है। रस्सियों से बँधा हुआ है, उसने जो मुँह खोला तो माँ की आँखें मुंद गई। विश्व के विराट स्वरूप के दर्शन कर यशोदा मैया डर गयीं और वह दृश्य अधिक देर तक देख ही नहीं पायीं। उस नटखट बालक के रूप में कृष्ण तो लीला कर रहे थे। पिटाई हो जाने के बाद माँ को दर्शन देते हैं और माँ का जन्म-जन्मान्तर के चक्र से उद्धार कर दिया।

इस दृश्य को चौथे सिख गुरु रामदास जी ने चार सुन्दर पदों में लिखा है परन्तु मुख्य पंक्ति जो है वो ये है – *"सत्यसाच श्रीनिवास आदपुरुख सदा तू ही"* – कहकर मैया ने जो दर्शन किया उस दर्शन को अपने शब्दों में उतारा है। सत्यसाच श्रीनिवास – वो सत्य है, वो सर्वश्रेष्ठ है, आदिपुरुष है–जिसका कोई प्रारम्भ नहीं है, जो सदा से है, सर्वव्यापक है, यानी सदा सब जगह है – वास्तव में उसी रूप का दर्शन करा है यशोदा मैया ने और उस अनुभव में इतने विभोर हो गये कि कहने लगे – *"वाहे गुरु,*

Scanned by CamScanner

वाहे गुरु, वाहे गुरु जी'' और कहते–कहते इतने मस्त हो गये कि विस्माद में अपने आपको खो दिया।

इसी तरह बाल नामदेश व विट्ठल (विष्णु) भगवान के प्रसंग की घटना है। भगवान की मूर्ति से कहते है *''दूध पियो, दूध पियो मेरे गोविनद राये।''* मेरे पिता से तो रोज दूध पीते थे, मुझसे क्यों नाराज़ हो या कोई और बात है ?'' बहुत बार कहते हैं। भगवान दूध नहीं पीते हैं तो धमकी दी है – ''अच्छा, नहीं पीते तो लाठी लाता हूँ।'' लाठी लाकर सामने बैठ गये फिर बोले – 'पी लो, नहीं तो लाठी से पिटाई करूँगा।'' उस बालक की सरलता पर मुग्ध होकर भक्त–वत्सल भगवान सचमुच प्रकट होकर दूध पी गये। साधना में सरलता एक महान गुण है जो हमारे में नहीं है। नामदेव जी की सरलता पर भगवान मुस्कराते हुए, साक्षात् दूध पी जाते हैं और बालक लाठी उठाकर अपनी सफलता पर संतुष्ट होकर, नाचता गाता चला जाता है और फिर तो विट्ठल भगवान ऐसे रीझे कि रोज़ ही नामदेव के पास रहने लगे और बातें करते थे उसके साथ।

मित्र सुदामा से प्रेम

एक और प्रसिद्ध प्रसंग है प्रभु की लीला का। सुदामा और कृष्ण बालक हैं। गुरु संदीपन के आश्रम में दोनों शिष्य हैं। लकड़ियाँ इकट्ठी करने के लिये गये हैं तो बारिश हो गयी। सर्दी लगी तो साथी सुदामा से पूछा, ''भैया कुछ है खाने के लिये ?'' सुदामा के पास चने थे, वह छिपाकर खा रहा था। आवाज़ तो आ रही

Scanned by CamScanner

थी। मगर सुदामा झूठ बोल देते हैं – "नहीं मेरे पास तो कुछ नहीं है" हम भी वैसे ही स्वार्थी और कंजूस हैं। भगवान भिन्न-भिन्न रूपों में आते हैं और हमारी हालत देखते हैं। वो तो दर्शन देने आते हैं पर हम अपने तुच्छ स्वार्थ-वश वंचित रह जाते हैं।

काफ़ी समय व्यतीत हो गया, भगवान को याद है कि सुदामा परममित्र तो थे किन्तु गुरुकुल वाले दिनों में, एक दिन उनको चने नहीं खिलाये थे। ग़रीबी के कारण पत्नी मजबूर करती हैं कि "इतने बड़े महाराज कृष्ण के कैसे मित्र हो कि जो इतनी निर्धनता में जी रहे हो? उनके पास जाओ तो सही।"

सुदामा फटेहाल में द्वारका पहुँचे संकोच से भरे हुए। समाचार मिलते ही स्वागत करने के लिए उत्सुक भगवान अपने दरबार से उठकर आते हैं, उसका आलिंगन करते हैं, जबकि वो धूल-मिट्टी से भरा हुआ है। उसको लाकर अपने सिंहासन पर बिठाते हैं और स्वयं नीचे बैठकर उसके पाँव धोते हैं, और वे जल स्वयं सेवन करते हैं।

रुक्मणी जी कहती हैं "ये क्या कर रहे हैं आप?" इस चरण को धोकर पीने में जो आनंद भगवान को आ रहा था रुक्मणी क्या समझती उसको। रुक्मणी जी क्या, हम ही क्या समझेंगे कि वो धूल से भरा हुआ पानी बीमारी पैदा करेगा या कुछ और हो जायेगा या इसमें नीचापन दिखेगा – परन्तु प्रभु तो निःसंकोच पी लेते हैं। भगवान तो अपने प्रिय मित्र (भक्त) के आने भर की प्रतीक्षा में थे। सुदामा के आते ही ऐसे आनंदित हो जाते हैं कि अपनी दैवी लीला से उसके घर को सोने का बना देते हैं। दुनियां भर की दौलत उसमें भर देते हैं। संसार की ही

Scanned by CamScanner

दौलत नहीं दी, उसके अतिरिक्त परमार्थ भी प्रदान कर दिया है। भगवान कितने विशाल हृदय हैं उनकी लीला विलक्षण है। एक तरफ़ तो सुदामा थोड़े चने के लिए कंजूसी करते हैं और उधर भगवान ने अपार कृपा करी है। सुदामा जी लौटे है तो अपनी धर्मपत्नी को एक नये रूप में सजी धजी देखा है और आश्चर्य से पूछा – "इतने सुन्दर कपड़े और कीमती आभूषण तू कहाँ से ले आयी?" पत्नी ने कृष्ण-कृपा का पूरा विवरण आदि बताया। अस्तु, भगवान के अपनी कृपा की लीला दिखा देने के विचित्र तरीके हैं।

गोपी प्रेम की विशेषता

भगवान ने एक ओर अद्‌भुत लीला दिखाई है – अपने योगी मित्र उद्‌धव व सत्यभामा जी को प्रेम की महत्ता समझाने के लिये। वह भी पूछते रहते थे कि गोपियों के प्रेम में ऐसी क्या बात थी कि आप सदैव उनकी ही सराहना करते रहते हैं। ऐसा भाव मन में आने पर सत्यभामा जी को गर्व हो गया कि वो तो भगवान को सबसे अधिक प्रेम करती है। परन्तु भगवान इस बात से संतुष्ट नहीं होते।

भगवान से पूछा गया भगवान कहते हैं – "अच्छा एक तराजू ले आओ। एक तरफ़ मैं बैठ जाता हूँ, एक तरफ़ जो तुम्हारे पास आभूषण है वो डाल दो। तुम्हारा ज़ेवर वाला पलड़ा भारी हो जायेगा तो मैं सब कुछ तुम पर न्यौछावर कर दूँगा।" उन्होंने बहुत ज़ेवर डाले, खाली कर दिये खज़ाने परन्तु भगवान का पलड़ा भारी रहा। सत्यभामा ने सोचा था कि ये कौन से बड़े भारी

Scanned by CamScanner

वज़न वाले हैं – मैं जब थोड़े बहुत ज़ेवर डालूंगी तो तराजू का पलड़ा मेरे हक में नीचे चला ही जायेगा। मैं जीत जाउंगी। सत्यभामा ज़ेवर तो डालती रही, पर मन में अहं भावना और शंका बनी रही।

और यही बड़ी बाधा है परमार्थ के इस रास्ते की। हम सब लोग इस अहं वृत्ति तथा शंका से प्रभावित हैं, हमें प्रभु चरणों में सच्चा प्रेम नहीं है, पूर्ण विश्वास नहीं है। प्रेम की शक्ति की यह कैसी साधना है ? उधर जब तराजू झुकी ही नहीं तो भगवान ने कहा – ''अच्छा, अब एक तिनका राधा या किसी गोपी के नाम का डालकर देखो।'' ऐसा करते ही वो पलड़ा ही नीचा नहीं हुआ बल्कि भगवान ने सब कुछ सत्यभामा को दे दिया।

''दर्शन देख जीवां गुर तेरा,
पूरण करम होये प्रभु मेरा।''

दर्शन क्या है इसे समझिये। ''पूरण कर्म होय तब मेरा'' पूरण काम क्या है ? संसार में जितनी भी सुख-सुविधायें हैं वो प्राप्त हो जायें और समस्त सुखों में परम सुख है-मोक्ष। हमारा लक्ष्य भी तो परमात्मा के वास्तविक दर्शन करना ही है, जिसके बाद मनुष्य जन्म-मरण के चक्कर में न पड़े। केवल शरीर के दर्शन से उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो सकती। शरीर के दर्शन, गुरु के शरीर के दर्शन, तस्वीर के दर्शन या परमात्मा के अन्य किसी स्वरूप के दर्शन वास्तविक दर्शन नहीं है। हाँ – इससे भक्तों में थोड़ा उत्साह अवश्य उत्पन्न होता है, श्रद्धा बढ़ती है, परन्तु वास्तविक दर्शन कुछ और ही है।

Scanned by CamScanner

भगवान श्रीकृष्ण का सारा जीवन ही अद्भुत लीला-प्रदर्शन रहा है। उनकी लीलाओं के क्रम को हम 'रास-लीला'' भी कहते हैं। वो सारा जीवन ही रास लीला करते रहे। ऐसी थी रासलीला जो वृन्दावन में ही नहीं हुई, जहाँ-जहाँ भी उन्होंने अपने पवित्र चरण कमल रखें, वहाँ-वहाँ हुई। भागवत् पुराण, महाभारत तथा अनेकों साहित्यिक ग्रंथ सब उनकी लीलाओं के विवरण से भरे हुए हैं। उनको वर्णन करना बहुत कठिन है।

गीता के माध्यम से श्री कृष्ण ने हम सब पर विशेष कृपा की है - जब उन्होंने अर्जुन को ये बताया कि - "तू कर्म कर, कर्म से डर मत। कर्म से घबरा नहीं, देख मैं भी कर्म करता हूँ।" दूसरा उदाहरण सूर्य का है। सूर्य भी कर्म करता है, चौबीस घंटे धरती उसके इर्द-गिर्द घूमती हुई उसका तेज पाती रहती है। परन्तु मेरे और सूर्य के कर्मो में और तुम्हारा कर्मो में भेद है कि तू जो अच्छे कर्म करेगा तो अच्छा फल मिलेगा और यदि बुरे कर्म करेगा तो बुरा फल मिलेगा। परन्तु हम जो कर्म करते हैं हमें उन कर्मो का फल नहीं भोगना पड़ेगा क्योंकि वे निष्काम कर्म होते हैं।

"ब्रह्म ज्ञानी सदा निर्लेप,
जैसे जल में कमल निर्लेप......तथा
ब्रह्म ज्ञानी सदा निर्दोष,
जैसे सूर सुरभ को सुख।"

Scanned by CamScanner

ये दोनों उदाहरण भगवान ने अर्जुन को दिये हैं। निष्काम भाव से कर्म करने वाले फल से न्यारे रहते हैं – कमल के फूल की भाँति, नीचे तो कीचड़ होती है और ऊपर रहते हुए बड़ी सुन्दरता के साथ खिला रहता है। स्वयं भी सुन्दरता से विभोर होता है और संसार को भी सुन्दरता प्रदान करता रहता है।

इसी तरह हमारे पूज्य गुरुदेव भी कहते हैं। जो ज्ञानी, ब्रह्मज्ञानी पुरुष होते हैं उनकी भी वही स्थिति होती है जो भगवान की है। ये करोड़ों में से कोई एकाध पुरुष ऐसा उत्पन्न होता है जो भगवान की तरह होता है। अर्जुन को तो अट्ठारह अध्याय गीता समझाये, परन्तु विश्व में हम सबके लिये उपयोगी प्रेरणा दी है – कर्म योग का रहस्य बताकर कि कर्म कैसे करने चाहिए। क्योंकि सभी को कर्म तो करना ही पड़ता है।

गीता में तीन अध्याय है : तीसरा, चौथा और पाँचवा जिनमें कर्मों के द्वारा हम भगवान की प्राप्ति कैसे करें ये बताकर उन्होंने विशेष कृपा की है।

अनेकों महापुरुषों ने, गाँधी जी ने, अरविन्द जी ने, लोकमान्य तिलक जी ने विशेषतः इन तीन अध्यायों पर अपनी कलम चलाई है। और भी विनोबा जी, स्वामी नारायण, प्रभुपाद भक्तिवेदांत, डोंगरे जी आदि कई महापुरुष हुए हैं जिन्होंने गीता पर टीकाएं लिखी है परन्तु उपरोक्त तीन महापुरुष तो हमारे देशवासियों में बहुत प्रसिद्ध है।

जन्माष्टमी के पवित्र त्योहार का दिन मनायें। बड़े अच्छे ढ़ंग

Scanned by CamScanner

से मनाते रहिए परन्तु साथ ही स्वनिरीक्षण भी करना चाहिए। और यह मनन भी करना चाहिये कि हम यह दिन क्यों और कैसे मनाते हैं ? मैं स्वयं निवेदन कर रहा हूँ कि मैं आपको सच बताता हूँ, मेरे चित्त पर भी मलीनता है। मैं स्वयं प्रार्थना करता हूँ कि भगवान मुझे भी सत्यनारायण जी का प्रसाद दे दें। अष्ठमी का प्रसाद दें जिससे मेरा भी चित्त निर्मल हो जाये। मैं भी कह सकूँ कि मैंने गीता पढ़ी है।

कहाँ तक कहूँ इतनी घटनायें उनके जीवन में हुई थी और वे सभी की सभी लीलाएं अद्‌भुत थीं। कहा जा सकता है कि सबसे विचित्र लीला जो उन्होंने की उसको ''रास लीला'' कहते हैं।

हम पढ़ लेते हैं, प्रश्न कर लेते हैं, और बोल लेते हैं परन्तु वास्तव में हमने प्रेममयी गोपियों जैसा समर्पण कभी भी गुरु के या भगवान के चरणों में नहीं किया। अनेक संत भक्तों ने अपने आपको स्त्री रूप में संबोधन किया है, जो कि वास्तव में समर्पण की प्रतीक मूर्ति है। इसलिये यह बड़ा उत्तम साधन है। *मैं बार-बार कहा करता हूँ पुरुष भी साधना में बहुत शीध्र सफल हो सकता है जब वह स्त्री के गुणों को अपनायेगा।*

ज्ञानी कह देता है -- शरीर भी मेरा नहीं, प्राण भी मेरा नहीं, मन भी मेरा नहीं'' – वास्तव में ऐसा कर पाने का बहुत ऊँचा स्थान है, साधना में। परन्तु वास्तविक तौर पर ऐसा समझना, सब कुछ प्रीतम का है और कुछ भी मेरा है ही नहीं – अर्थात्

Scanned by CamScanner

में और मेरापन निकाल देना – कहने में बड़ा आकर्षक लगता है, मगर वास्तविक रूप में, कर्म और व्यवहार में यह बहुत कठिन है। ज़रा सी ऊँची-नीची बात कह देते हैं तो तूफान आ जाता है घर में चाहे वो पुरुष हो या स्त्री। ऐसा व्यवहार क्यों हुआ? यह सब तो कोरे अहंकार का ही स्वरूप है।

इस अवसर पर मेरी आप सबसे प्रार्थना है कि भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं का स्मरण करें। महात्मा गाँधी कहा करते थे और मुझे भी बड़ा अच्छा लगता है कि गीता का बारहवां अध याय सबको रोज पढ़ना चाहिए। मेरा निवेदन है कि उस अध्याय के अन्तिम 8/10 श्लोक (12 से 19) तो बड़े धैर्य के साथ, अर्थो को समझते हुए पढ़ें। और एक-एक को लेकर मनन करें।

जिनकी साधना में तीव्रता नहीं आती उन्हें तो ये श्लोक कुछ दिन या कुछ सप्ताह तक रोज़ पढ़ने चाहिये। भाइयों को कहता हूँ कि इसका लाभ अवश्य होगा। परन्तु कोई भी व्यक्ति मुझे कृतार्थ नहीं करता। ऐसा करके भी प्रभु कृपा प्राप्त न हो तो पूज्य गुरुदेव की एक बात याद आती है। वे कहा करते थे कि 'यदि इष्टदेव कंजूसी करें तो उनके पीछे ही पड़ जाना चाहिये और कहना चाहिए कि या तो हमें अपनी बख़्शीश से मशकूर (कृतार्थ) करें, वरना आप ही हमें सीनाजोरी करने पर मजबूर करेंगे।

ये प्रेम लीला विचित्र है इसमें विद्या व्याकरण या चतुराई काम नहीं करती। प्रेम में, भक्ति भाव में, बुद्धि को एक तरफ़ रख देना चाहिए। इसमें बड़ी कठिनाई होती है जिसके लिए ईश्वर

Scanned by CamScanner

से प्रार्थना करनी चाहिए कि "हे प्रभु अपना प्रेम प्रदान करो।" प्रेम में या भक्ति और ज्ञान में वास्तव में कोई अन्तर नहीं है। जब तक मन की साधना रहती है वह भक्ति कहलाती है। जब ये आत्मिक स्तर पर राधा जी के स्तर तक उठ जाती है, तो ये आत्मा का रूप धारण कर लेती है। उसमें कान्ता भाव आ जाता है जो बहुत ऊँची अवस्था है।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने भी भगवान के दर्शन किये हैं – 17 या 18 भिन्न-भिन्न तरीकों से। और संसार को बताया है कि सभी धर्मों के – सभी साधनों के मार्ग यही हैं। स्वामी विवेकानंद जी सिर्फ दार्शनिक तौर से कहते हैं परन्तु उनके गुरु ने वास्तविक साक्षात् दर्शन किये थे देवी-देवताओं के, इस्लाम की ओर इसाई मत (Christianity) की, साधनाओं की, गोपी भाव लेकर स्त्री रूप से साधना की, ज्ञान की पद्धति से भाव तथा अन्य अनेकों प्रकार से की हैं। प्रभु ने उन्हें इतनी शक्ति दे रखी थी कि तीन चार दिन की तीव्र साधना के पश्चात् ही उनको उस ध र्म की मान्यता अनुसार प्रभु के दर्शन हो जाते थे। माँ दुर्गा के दर्शन – और उनमें साक्षात् वार्तालाप – तो नित्य ही होता था। हम सत्संगी भाई बहनों को चाहिए कि हम भी जन्माष्टमी जैसे पवित्र त्यौहारों के रहस्य को सही तौर पर समझें – फिर उन्हें आध्यात्मिक प्रेरणा के साथ सामाजिक, लौकिक परम्परा के अनुसार परिवार के बच्चों और बड़ों के साथ सानंद मनाना सीखें।

प्रसंगवश हमारे पूज्य गुरुदेव की स्वयं अपने मुखारविन्द से सुनाई गई एक विशेष बात बताऊँ – कि जब वे बालक थे

Scanned by CamScanner

तो सिकन्दराबाद वाले घर में जहाँ मवेशी बंधते थे वाहँ एक भूसी की कोठरी थी। वे अकेले में वहाँ जाकर कृष्ण भगवान को याद किया करते थे। वहाँ आपको भगवान कृष्ण के बाल स्वरूप के दर्शन हुआ करते थे।

आपको इस पावन जन्माष्टमी की बहुत-बहुत बधाई।

Scanned by CamScanner

सावधान! समय थोड़ा है और मानव चोला अमूल्य

मनुष्य शरीर ही एक ऐसा उपकरण है जिसके बिना आत्मा या परमात्मा का साक्षात्कार नहीं हो सकता। इस शरीर को पाने के लिए देवतागण भी ईश्वर से प्रार्थना करते रहते हैं कि उन्हें मनुष्य चोला मिले ताकि वे मोक्ष का साधन कर सकें। केवल इस मनुष्य शरीर रूपी उपकरण से आध्यात्मिकता का साधन हो सकता है। यह मनुष्य शरीर जो हमें ईश्वर कृपा से प्राप्त हुआ है उसका सदुपयोग करना चाहिए। परन्तु मनुष्य ने इसको आलसी बना दिया है, संसार में मोहग्रस्त हो रहा है, अपने मन के और इन्द्रियों के सुख में फँसा हुआ है। कुछ बुद्धि से विचार करने लगता है तो मन के विचारों में जल्दी फँस जाता है – जैसे कि परमात्मा को ये सूझा क्या कि उसने यह सृष्टि बनाई, पाप-पुण्य और जन्म-मरण के सुख-दुख बनाये आदि – ऐसी बातों में वह अपना समय व्यर्थ खोता रहता है। इस विषय में पूज्य डा. ए. के बैनर्जी साहब का कथन कितना सही मार्गदर्शन करता है। "All intellectual discussions and queries about subtle and abstract subjects are futile exercises" अर्थात पराज्ञान संबंधी सूक्ष्म तथा

Scanned by CamScanner

गंभीर विषयों पर वाद-विवाद और बौद्धिक चर्चाएं करना महज समय की बर्बादी करते हैं।

कबीर साहब ने कहा है कि पढ़ाई से बुद्धि का विकास और फिर आध्यात्मिक साधना तो बचपन से ही शुरू कर देनी चाहिये। यदि किसी कारण बचपन निकल गया है, युवा अवस्था आ गई है, तो होश में आना चाहिए। युवा अवस्था भी निकल गई है, जरा अवस्था यानी बुढ़ापा आ गया है, मृत्यु सामने दीखती है तब भी हमको होश आ जाना चाहिये। तब भी नहीं किया, यमराज के दूत आ गये हैं, कबीर साहब कहते हैं कि अब तो कुछ कर लो। तो उस वक्त मनुष्य से कुछ होता नहीं क्योंकि उसका स्वभाव ऐसा बन चुका होता है कि वह शरीर से भले ही दुखी हो, आर्थिक कठिनाईयाँ हों, संसार जूते लगाता हो फिर भी वह संसार में इतना मोहग्रस्त हो चुका है कि मरना नहीं चाहता और अब विवश है कि कोई अन्य साधन भी नहीं कर सकता।

कोई व्यक्ति मरना नहीं चाहता है चाहे कितनी भी कठिनाइयाँ क्यों न हों। पूज्यसंत शिवव्रत लालजी ने एक बड़ा रोचक शिक्षाप्रद दृष्टांत लिखा है - एक मुसाफ़िर जंगल में गुज़र रहा है, पीछे से शेर आया पकड़ने के लिये। उस मुसाफ़िर ने पास ही कुआं देखा, उसमें छलांग लगा दी। किसी तरह कुएं में लगे हुए एक वृक्ष की शाखा उसके हाथ लग गई। उसे पकड़ कर कुएं में लटक गया। क्या देखता है कि नीचे एक मगरमच्छ मुँह खोले उसके गिरने के इंतजार में है। ऊपर दो चूहे हैं। एक सफेद और एक काला, वे उसी डाल को काट रहे हैं। परन्तु वृक्ष में लगे मधुमक्खी के छत्ते में से शहद की बूँदे गिर रही हैं जो उसके मुँह में जा

Scanned by CamScanner

रही हैं। वह व्यक्ति कितनी मुसीबत में घिरा है कि मौत हर तरफ़ दिखाई दे रही है, और समय व्यतीत होता जा रहा है, दिन और रात रूपी चूहे आयु को निरन्तर काट रहे हैं। देख रहा है कि ऊपर से चूहे डाल काट देंगे तो तुरन्त नीचे गिरेगा। किन्तु इन बातों का उसको ज़रा भी ख्याल नहीं आ रहा है और वह मूर्ख ऊपर से टपकती हुई कुछ मधु के बूँदों के रसास्वादन में लगा है।

महात्मा शिवव्रत लालजी ने इस रूपक द्वारा यही बताया है कि चूहे क्या हैं, नीचे मगर और जल क्या है, पेड़ क्या है, आदि – ये जो चूहे हैं वह आयु है, समय है। चूहों का काम है काटना, वे हर वस्तु को काटते रहते हैं। हमारी आयु कट रही है। किसी वक्त भी उस मगर के मुँह में, जो मृत्यु का रूप है, गिरना है। वह जंगल जो है ये संसार है जहाँ चारों ओर खतरे हैं, और आशंकाएं, उत्तेजनाये हैं, कोई सुख नहीं है फिर भी मनुष्य को होश नहीं है, वह शहद रूपी सांसारिक क्षणिक सुखों के आनंद में लिप्त रहता है।

इस शरीर को बदलने में और दूसरा शरीर धारण करने में जिसको मृत्यु कहते हैं, उससे सब लोग डरते हैं। चाहे यह जानते हैं कि मृत्यु तो आनी ही है, यह जीव एक शरीर को छोड़कर दूसरा शरीर बदलेगा परन्तु फिर भी व्यक्ति उससे डरता है। कैसी यातनायें मिलेगी, कैसी मृत्यु होगी ? सुख की कोई नहीं सोचता, दुख को ही सोचता है। मन में पाप भरे होते हैं। इंसान अगर बैठकर सोचने लगे कि बचपन से लेकर अब तक मैंने कितनी ग़लतियाँ की हैं तो वह पागल सा हो जाता है, मौत के वक्त अपनी जीवन

Scanned by CamScanner

भर की बुराई–भलाई की बातें सामने आती हैं। इसीलिये व्यक्ति मौत से घबराता है।

गुरुदेव भी ऐसी ही एक कहानी सुनाते थे। विष्णु भगवान ने नारद जी से कहा है कि 'बैकुण्ठ में खाली स्थान है। आप मृत्यु लोग यानी संसार में जाइये और वहाँ से अच्छे प्राणियों को यहाँ लाइये, उनको सुख मिलेगा।' नारद जी गये हैं। गर्मी खूब पड़ रही है। एक व्यक्ति सिर पर भारी गठ्री उठाए हुए है, ठीक से ले जा भी नहीं पा रहा है और कह रहा है कि 'हे प्रभु, तू बड़ा अन्यायी है तेरे घर न्याय नहीं है। इतना दुखी हूँ मैं। तू मुझे मौत ही दे दे। मरने के बाद तो यह दुख नहीं होगा, न घर के व्यक्ति होंगे जिनके कारण यह सब सहन करना पड़ रहा है, इत्यादि। नारद जी ने सोचा कि यह मनुष्य संसार से ऊब गया है, चलो हम इसको बैकुण्ठ में ले जाते हैं। उस व्यक्ति से कहा ''भाई तुम घबराओ नहीं, मैं तुम्हें बैकुण्ठ में लिये चलता हूँ। वहाँ तुम्हें हर प्रकार से बड़ा सुख मिलेगा।

तो वह व्यक्ति नारद जी से कहता है कि 'भगवन्, आपकी बड़ी कृपा है जो आप मुझे बैकुण्ठ में ले जाने के के लिए प्रेरित कर रहे है, परन्तु मेरे ऊपर मेरे बच्चों का कुछ दायित्व है। वे अभी छोटे–छोटे हैं। जब वे बड़े हो जायें तब आप आइयेगा, मैं आपके साथ प्रसन्नतापूर्वक चलूंगा। ज़रूर चलूँगा। नारदजी कुछ काल बाद पुनः आये। तब तक बच्चे जवान हो चुके थे और वह व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त होकर बैल बन गया था।

नारदजी ने उस बैल को संबोधित करके कहा, ''तू अब भी चल'' तो उसने उत्तर दिया – महर्षि मेरे ये बच्चे बड़े प्रमादी हैं।

Scanned by CamScanner

यदि मैं खेत नहीं जोतूँगा तो क्या करते, खेती नहीं होगी और ये भूखे मर जायेंगे। कुछ दिन आप और प्रतीक्षा करें। तब तक लड़कों को कुछ समझ आ जायेगी।' नारदजी फिर वापस चले गये।

फिर जब तीसरी बार आये तब तक बैल मर चुका था, कुत्ता बना बैठा था। नारद जी ने कहा कि "अरे अब तो तू चल मेरे साथ। कैसी योनी में फँसा है। गन्दगी खाता है, दुर्दशा में पड़ा है" तो वह बताता है कि "बच्चे अपनी सम्पत्ति को सम्भाल नहीं सकते इसलिए पड़ा हूँ – रखवाली करता रहता हूँ। कुछ और समय ठहरिये।"

नारदजी कुछ समय बाद जब आये तो वह कुत्ता भी मर चुका था। ज्ञान दृष्टि से देखा तो सड़ी हुई गंदी नाली में एक कीड़ा पड़ा हुआ है – यह वही व्यक्ति था इस नई योनी की शोचनीय अवस्था में। नारद जी कहते हैं। – "अरे तू कहाँ पड़ा सड़ रहा है ? चल मेरे साथ। हद हो गई है तेरी दुर्दशा की।" तो वह प्राणी क्या कहता है। "भगवन् आप मेरे ही पीछे क्यों पड़े हैं। क्या कोई अन्य व्यक्ति आपको अब तक नहीं मिला जो बैकुण्ठ में जाने के लायक हो और आपके साथ चला जाये ?"

यह हम सबकी अवस्था है। हम समझते हैं कि यह काम और कर लें, वह काम रह गया उसे भी पूरा कर लें। इसी में मृत्यु आ जाती है। दुख में रहते हुए दुख से घबराते भी हैं परन्तु चेतते नहीं और न कोई ऐसा साधन करते है जिसके फलस्वरूप

Scanned by CamScanner

हम अपने जीवन को सुधार कर ईश्वर के चरणों में स्थान पा सकें और सच्चे आनंद की प्राप्ति करें।

तो पहला काम है 'सचेत हो जाना। ये श्री गणेश है - साधना का, परन्तु गुरु की कृपा के बिना साधक पूर्णतः सचेत नहीं हो पाता, जागृत नहीं हो पाता। एक तो साधारण निद्रा है और एक माया की निद्रा है जिसमें हम फँसे हुए हैं। जान-बूझकर फँसे हुए हैं। एक मूढ़ व्यक्ति चाहे तो ऐसा करे क्योंकि उसको कुछ समझ नहीं है लेकिन जो बुद्धिजीवी हैं, विद्वान हैं, सब कुछ समझते हैं। वे भी माया में फँसे हैं। माया भी कई प्रकार की है। धन सम्पति माया है, स्त्री-बच्चे, संबंधी आदि भी माया हैं और भीतर में जो विचार उठते रहते हैं वह भी माया का ही रूप है। अधिकतर व्यक्ति अपने विचारों में ही उलझा रहता है। इस माया से छूटना मुश्किल है, बहुत ही कठिन है।

संध्या में बैठकर उपासना करते हैं - कहते हैं कि साहब क्या करें ? विचार आते रहते हैं। कैसे विचार आते हैं ? जब उत्तर मिलता है तो स्पष्ट हो जाता है कि कहाँ फँसे हुए हैं। जीव भी क्या करें ? कमज़ोर हैं। अपने बलबूते से निकलना बड़ा कठिन है। असंभव नहीं, कठिन है। यदि भीतर में सच्ची जिज्ञासा उत्पन्न हो जाती है, व्यक्ति सचेत हो जाता है, रोता है तब संतजन कहते हैं 'जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ''। हज़रत ईसा भी यही कहते हें कि 'खोजोगे तो पाओगे'।

जब यह स्थिति आ जाती है तब भगवान की कृपा से कोई

Scanned by CamScanner

समर्थ व्यक्ति मिलता है और अपना बल देकर हमें रास्ते पर लगा देता है। उसको हम गुरु कहते हैं। वही हमारा मार्गदर्शन करता है। रास्ता बतलाता है कि किस प्रकार माया–जाल से मुक्त हों। पाँचों जन्मों में यदि व्यक्ति आलस, प्रमाद को छोड़कर खोज करता रहे, सचेत होकर प्रभु के चरणों में रोता रहे तब कहीं जाकर गुरु मिलता है। सच्चा गुरु जो होता है यह परमात्मा ही होता है। यह भी सच है कि गुरु और परमात्मा में कोई अन्तर नहीं है।

इस गुरु वेष में संसार का जहाँ उद्धार हुआ है वहाँ पतन भी बड़ा हुआ है। विचित्र विडम्बना है कि हज़ारों लोगों ने गुरुआई को धंधा ही बना लिया है। किसी की आलोचना करना उचित नहीं है। परन्तु सावधान करना भी एक फर्ज है। गुरु यदि मिल भी जाये तो उसकी पहचान कैसे हो कि सच्चा गुरु कौन है और बनावटी गुरु कौन है ? इस पर कबीर साहब की बाणी बड़ी स्पष्ट है। उन्होंने सच्चे गुरु की पहचान की मिसालें बतलाई है। और दूसरे व्यक्तियों की भी पहचान बतलाई है। सच्चा गुरु वही है जिसमें परमात्मा के गुण हों, जो शास्त्रों में वर्णित हैं, जो हम महापुरुषों से सुनते आये हैं। ऐसे दिव्य गुण यदि उस व्यक्ति में हो तो उसका दामन (पल्ला आश्रय) पकड़ लेना चाहिये। यहाँ कबीर साहब सावधान करते हैं कि हो सकता है कि परख करने में ग़लती हो गई हो, तो सावधानी से काम लें।

जिस प्रकार गुरु शिष्य की परीक्षा लेता है उसी प्रकार शिष्य

Scanned by CamScanner

को अधिकार है कि वह गुरु की परीक्षा लें। सच्चा गुरु ऐसे पता लगेगा कि उसके पास बैठने से शान्ति मिलती है या नहीं, मन एकाग्र होने लगता है कि नहीं, बिना गुरु के श्रीमुख से कहे हमें अपनी त्रुटियां दिखने लगती है कि नहीं। उनके पास बैठने से हमें प्रेरणा मिलती है कि नहीं, कि हम अपनी बुराईयों को छोड़े और उनके पास बैठने से बुराइयां छूटती भी हैं कि नहीं। जब तक भीतर में बुराइयाँ नहीं छूटेंगी, विकार दूर नहीं होंगे, मन स्थिर नहीं रहेगा, शान्त नहीं होगा, आप चाहे जितनी उपासना करते रहें, आपको साक्षात्कार अपने स्वरूप का, गुरु के वास्तविक रूप का, या परमात्मा का, नहीं हो सकता।

सच्चे गुरु के सम्पर्क में आने से आपके विकार छूटने चाहिए। जैसे दर्पण के सामने दिखाई देता है, उसी प्रकार उस महान व्यक्ति के पास बैठने से क्या अपने दोष दिखते हैं या मन शान्ति, आनंद और सुख की अनुभूति करता है? यदि ऐसा हो तो समझ लेना चाहिए कि यही व्यक्ति जो हमारा आदर्श बन रहा है, ईश्वर प्राप्ति में सहायक हो सकता है। और आगे बढ़िये। देखिये कि वह व्यक्ति धन-दौलत अथवा मान-सम्मान का भूखा तो नहीं है? हाथ पाँव की सेवा कराने का इच्छुक या लालची तो नहीं है? स्वयं माया में तो ग्रस्त नहीं है? उसका जीवन वास्तव में सबके साथ आदर्श व्यवहार का है या नहीं।

गुरु महाराज कहा करते थे कि यदि बाजार में कोई सौदा खरीदना होता है तो दस दुकानें देखते हैं, सौदा परखते हैं, यह

Scanned by CamScanner

देखते हैं कि कौन सी दुकान पर सौदा अच्छा मिलता है और सस्ते दामों में मिलता है। जहाँ यह बातें पूरी होती है वहीं से सौदा खरीदते हें। तो ऐसे ही गुरु करने से पहले गुरु की पहचान कर लेनी चाहिए, इसमें कोई हर्ज़ नहीं है।

किन्तु एक बार गुरु धारण करके फिर उसमें पूर्ण श्रद्धा और विश्वास ले आना चाहिए। सभी संतों ने ईश्वर की तुलना में गुरु का दर्जा बड़ा बताया है क्योंकि वह हमें ईश्वर से तद्‌रूप करा देता है। कबीर साहब आदि संतों का यही विश्वास था कि बिना गुरु के ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती है, इसलिए गुरु को उन्होंने मुख्य रखा।

संतमत और सूफियों के सिलसिलों में तो गुरु प्रणाली अनिवार्य ही है। गुरु का महत्व इतना अधिक है सो कबीर साहब के गुरु-गोविन्द दोनों खड़े...........वाले पद को देखें - उसमें उत्तर भी स्पष्ट है :-

गुरु गोविन्द दोनों खड़े काके लागूँ पाँय।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दियों मिलाये।।

वास्तव में यह स्वरूप या शब्दों का ही हेर फेर है - भाव तो एक ही है, गुरु और ईश्वर एक है। ईश्वर ही उस व्यक्ति में पूर्णतः समाया हुआ है। वो ही ईश्वर है। जैसे भगवान् कृष्ण गीता में विश्वास दिलाते हैं कि जब भी संसार में असंतुलन बढ़ता है परमात्मा स्वयं मनुष्यों के उद्धार के लिए आते हैं। ऐसी ही महान

Scanned by CamScanner

आत्मायें जो संसार के कल्याण के लिए आती हैं वे ही गुरु का रूप धारण करती है।

हम बड़े सौभाग्यशाली हैं कि मानवी–चोला मिला, लिखने–पढ़ने का अवसर मिला और फिर आत्मिक उन्नति कराने के लिए सच्चे गुरुजन का दिशा–बोध और श्रेष्ठ मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ। इसलिए अत्यंत गंभीरता से स्वनिरीक्षण करें। कितना वक्त गँवा दिया है। समय का पहिया तो बहुत तीव्र गति से बढ़ता जा रहा है और यह चेतावनी दे रहा है कि जीवन का क्या भरोसा ? वक्त थोड़ा है, अब भी चेत जायें। हमें चाहिये कि जागरूक होकर हर घड़ी शेष समय का पूरा–पूरा लाभ उठाने में निरन्तर लगे रहें।

●●●

Scanned by CamScanner

अपने ध्येय के प्रति जागरूक रहें व गंभीरता से प्रयास करें

मैंने बारम्बार निवेदन किया है और आज फिर प्रार्थना करता हूँ कि प्रत्येक सत्संगी भाई–बहन को अपने लक्ष्य के प्रति गंभीर होना चाहिये। सत्संग में आये, इधर–उधर की बातें सुनीं प्रसाद लिया और फिर बातें करते हुए घर चले गये। हमने ग्रहण क्या किया, हम काहे के लिये यहाँ आये हैं। घर से चलने से पहले सोच लेना चाहिये कि हम सत्संग में जा रहे हैं तो हमें क्या करना है वहाँ जाकर। क्या लेने जाना है वहाँ? क्या सीखना, समझना और करना है।

पूज्य गुरुदेव चेतावनी देते रहे कि प्रत्येक व्यक्ति को खूब समझ लेना चाहिये कि शरीर नश्वर है, सदा रहने वाला नहीं है। इस शरीर के साथ मोह या अन्य शरीरों के साथ लगाव के बंधन से मुक्त होने का प्रयास होना चाहिये जो कि बड़ा कठिन है। माता–पिता बच्चों से चिपके हुए हैं, बच्चे माता–पिता से चिपके हुए हैं और इसी तरह के अपनी ओर खीचने वाले संसार में बहुत सारे प्रलोभन है।

सबसे ज़्यादा चिपकाव व्यक्ति का अपने विचारों के साथ होता है। कोई व्यक्ति नहीं है जो सारा दिन विचारों के जंजाल

Scanned by CamScanner

में नहीं घिरा होगा। कोई नहीं है जो हर समय कुछ न कुछ सोचता नहीं रहता। मैं यह करूँगा, मैं वह करूँगा, मैं ऐसा मकान बनाऊंगा, वैसे बिजनेस करूँगा - सारा दिन इसी उधेड़ बुन में फँसा रहता है। और फिर स्वप्न भी इसी तरह के आते हैं।

यह तो ईश्वर की कृपा है कि दो-चार घड़ी के लिये हम लोग यहाँ आ जाते है किन्तु इन गिने-चुने मिनटों में भी हमारा ध्यान संसार भर की अपने समस्याओं की ओर भटकता रहता है। ईश्वर के चरणों की तरफ़ ध्यान नहीं होता। गुरु महाराज चेतावनी दे रहे हैं कि यह शरीर तो हमारा साथ नहीं देगा - आज छूट जाये, कल छूट जाये कुछ पता नहीं।

परन्तु जब तक यह है, तब तक तो हम अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये सतर्क रहें। जब इस शरीर के साथ हमारा संबंध टूट जायेगा तो कोई हमारे साथ नहीं जायेगा - न धन जायेगा, न सम्पत्ति न हमारी संतान जायेगी न संबंधी - केवल हमारी आत्मा और उसके ऊपर चढ़ाये आवरण अर्थात् जो हमने कर्म किये हैं उनसे संबंधित संस्कार - वो हमारे साथ जायेंगे।

साधना यह है कि इस मानव चोले में रहते हुए ही इस आत्मा के ऊपर जितने आवरण हैं उनसे मुक्त हो जायें। कहते हैं शरीर छोड़ने के बाद मोक्ष मिलता है। नहीं, ऐसा कुछ नहीं है। जिसको इस शरीर के रहते हुए मोक्ष की प्राप्ति नहीं हुई, शरीर छोड़ने के बाद मोक्ष का, उसको स्वप्न भी नहीं लेना चाहिए। साधना तो यही है कि शरीर रहते हुए हम अपने जीवन

Scanned by CamScanner

के लक्ष्य को प्राप्त कर लें। गुरु महाराज बता रहे हैं आपकी आत्मा ही सदा साथ रहने वाली है। यही सच्चा सुख, शान्ति और सच्चा आनंद देने वाली है।

आत्मा के ऊपर जितने आवरण है – शरीर का, मन का, बुद्धि या आनंद का और इनके कारण और जितने संबंध है ये सब नष्ट होने हैं। इन सबसे शरीर के रहते हुए हमें मुक्त हो जाना चाहिये। साधना यही है। आत्मा की कोई साधना नहीं की जाती, ऐसी साधना की कोई आवश्यकता नहीं है। साधना शरीर, मन और बुद्धि की शुद्धि के लिये की जाती है। शरीर एक रथ है। भगवान कृष्ण भीतर में बैठे हुए हैं, सारथी बनकर वे हमारे मन व बुद्धि को चलाना चाहते हैं, परन्तु काल या शैतान भी हमारे भीतर में बैठा हुआ है जो हमारे सब प्रयासों को प्रतिक्षण असफल करता रहता है। इसलिये प्रतिक्षण सावधान रहना चाहिए। इस सावधानी को ही साधना कह सकते हैं।

हम भूल जाते हैं, इन सब तथ्यपूर्ण बातों को छोड़कर इन्द्रियों के रसों में फँस जाते हैं। वाद-विवाद में फँस जाते हैं, बुद्धि की चतुराई में फँस जाते हैं। भाँति-भाँति के सांसारिक वातावरण में घिर जाते हैं। आत्मा को, गुरु को या परमात्मा को हम भूल जाते हैं। पहला साधन यह है कि उसे हम हर समय याद रखें। उसके नाम का संग नहीं छोड़ना चाहिये। सब महापुरुषों ने यही बताया है कि नाम द्वारा ईश्वर के चरणों को छोड़े नहीं, या अपनी आत्मा को या गुरु के ध्यान को छोड़े नहीं – यह सब एक ही बात है। परमात्मा के दर्शन जिस व्यक्ति के शरीर में करते हैं, उसको गुरु

Scanned by CamScanner

कहते हैं, प्रत्येक व्यक्ति को गुरु नहीं कहा जाता। प्रत्येक व्यक्ति गुरु कहलाने का अधिकारी हो ही नहीं सकता।

प्रभु के नाम की महत्ता

महापुरुष प्रार्थना करते हैं कि आपकी स्मृति मेरा जीवन है और आपके चरणों से दूरी यानि विस्मृति ही मेरी मृत्यु है। उसकी समीपता ही हमारा जीवन है, उसका आशीर्वाद ही हमारा जीवन है। बाकी सब कुछ मन–बुद्धि का विलास है। हम में से कोई भी न तो समझता है कि नाम क्या होता है और न हम उस नाम को लेते हैं। नाम और नामी में कोई अन्तर नहीं है। केवल समझने के लिये महापुरुषों ने भिन्न–भिन्न तरीके से नाम को समझाया है।

नाम एक सीढ़ी है। परमात्मा से आत्मा बिछुड़ गई है। उसे परमात्मा तक पहुँचने के लिए जो सीढ़ी लगानी है, जो साधन अपनाना है उस साधन को या उस सीढ़ी को नाम कहते हैं। और उसी पर चढ़कर प्रभु के चरणों में लय होने को नाम कहते हैं। इसमें तर्क–वितर्क नहीं करना चाहिये। साधना तो एक सीढ़ी है। कोई किसी पाये पर खड़ा है कोई किसी पर। अभी तक किसी को नाम की प्राप्ति नहीं हुई है, कोई परमात्मा के चरणों तक नहीं पहुँचा है।

नाम की प्राप्ति हो जाने पर साधक और ईश्वर में कोई अन्तर नहीं रह जाता है। व्यक्ति मौन हो जाता है। यह जो मौन हम करते हैं यह एक नकल है। यह एक साधन है मौन किसका करते हैं। शरीर मौन हो जाये, प्राण स्थिर हो जाये यानि 'कुम्भक' हो जाये। प्राण चलते हुए तो विचार आते ही रहेंगे। साधन करके

Scanned by CamScanner

प्राण स्थिर हो जायेंगे तो संकल्प-विकल्प भी धीरे-धीरे और विलुप्त होते जायेंगे। फिर बुद्धि की चतुराई भी शांत होती जायेगी। इसके बाद आता है आनंद अर्थात् आनंद का आवरण। यहाँ आकर मनुष्य अहंकारी हो जाता है। अभिमानी हो जाता है कि उसने तो सब कुछ पा लिया। थोड़ा सा (आत्मिक आनंद का) रसास्वादन किया तो यह समझने लगता है कि मैंने सारे संसार का रहस्य जान लिया। यह भूल है, बड़ी भारी भूल है। माया मारती है तो संतों को भी मारती है। उन व्यक्तियों को मारती है जो कहते हैं मुझे बहुत ज्ञान है। इस रास्ते पर कभी भी ज्ञानी होने का घमंड नहीं करना चाहिये। एक बच्चे की तरह, एक शिशु की तरह अज्ञानी ही बने रहना चाहिये। ऐसे साधक रास्ते में ही असफल हो जाते हैं – जिसने कहा वो ज्ञानी हो गया उसको माया या काल नहीं छोड़ेगा।

''कहु नानक मैं नाहीं कोउ गुण। राख लैहयो शरणाई।
''कहुं नानक तुम बिरद पहचानों, तब हो पतित तरौं।''

अर्थात् मेरे पास तो कोई गुण नहीं है। प्रभु आपका ही विरद है। आप ही अपना विरद पहचानों। तभी मुझ जैसे पतित का उद्धार होगा।

हमेशा दीन भाव को अपनाना चाहिये क्योंकि परमात्मा को ऐसा भक्त बहुत प्रिय है जिसका अपना रूप भी दीनता का है। जो अधिक चतुर बनते हैं वो धोखा खाते हैं। दीन बनना है दीन, अति दीन, अतिदीन। यानी यह स्थिति रहने लगे कि शरीर भी

Scanned by CamScanner

मेरा नहीं, प्राण भी मेरे नहीं, मन भी मेरा नहीं, बुद्धि भी मेरी नहीं–तब ऐसी अवस्था में मौन सधेगा। मौन का मतलब है स्थिरता का आ जाना। तब जाकर आत्मा का प्रकाश, गुरु का प्रकाश भीतर पड़ेगा। आत्मा–परमात्मा के दोनों प्रकाश जब मिल जाते हैं तो वो योग या मिलन कहलाता है।

आत्मा और परमात्मा के मिलने का यह एक सरल रास्ता है। और भी परमार्थ के अनेक रास्ते हैं जैसे कि वेदान्त का रास्ता है, योग का और प्रेम भक्ति या गुरु भक्ति का रास्ता है तथा अन्य अनेक रास्ते है परन्तु है सब ठीक। किसी को गलत नहीं समझना या कहना चाहिये। जिसको जो अच्छा लगता है, जिस ईश्वरीय स्वरूप की भी स्तुति करता है, उसको वो ही रास्ता अपनाना चाहिये।

पुराने समय में गुरुजन वेदांत का और योग का सार बतलाते रहे है। जितनी चीज़े नज़र आती है, जितना वातावरण बाहर और भीतर नज़र आता है वह सारा नश्वर हे। सब पदार्थ नाश होने वाले है यदि कोई वस्तु रहने वाली है तो केवल आत्मा और परमात्मा–वेदांत यही कहता है वह थोड़ा दोष–दृष्टि से इसको देखता है। वो कहता है शरीर में तो मल है इसको खोलकर देखो तो सही इसमें है क्या ? रोज देखते हैं मुँह से बलग़म निकलती है, शौच आदि के लिए जाते हैं क्या निकलता है, कितनी बू आती है। दो मिनट से ज्यादा वहाँ बैठ नहीं पाते हैं। यह सारी गंदगी तो तेरे भीतर भरी रहती है, तू किससे प्रेम कर रहा है। छोड़ इस शरीर को। इस प्रकार दोष–दृष्टि से वेदांती इस शरीर से अपने आपको अलग करता है।

Scanned by CamScanner

ज्ञानी अपनी सुरत को आत्मा में ले जाता है। भीतर में, और उसको उसमें विलय कर देता है। अर्थात् ज्ञान द्वारा आत्मा के स्वरूप की अनुभूति करता है। वो तरीका भी सही है। प्रेमी अपने इष्टदेव से इतना प्रेम करता है कि वो अपनत्व या अपना अस्तित्व ही भूल जाता है। कबीर साहब के शब्दों में –

''तू तू करता तू भया, मुझमें रही न हूँ।
आपा फिरका मिट गया, जत देखूं तत तू॥''

प्रेमी तो अपने प्रीतम के प्रति अपना सब कुछ न्यौछावर कर देता है। प्रेमी–भक्त का तो यज्ञ यही है। हम जो यज्ञ करते हैं वह स्थूल यज्ञ है। जिससे बाहरी वातावरण शुद्ध होता है। वास्तव में आध्यात्मिक यज्ञ यही है कि इस शरीर को, मन को, सब कुछ अपने प्रीतम के चरणों में अर्पण कर दें, उनकी आहुति दे दें। इस यज्ञ की अन्तिम उपलब्धि जो सबकी अपनी अनुभूति द्वारा होती है वो है वास्तविक ज्ञान, आत्मिक प्रकाश के स्वरूप का दर्शन या साक्षात ब्रह्मदर्शन......कुछ भी कह सकते हैं।

इस परमानंद में स्थिति पाने के लिये चाहे कोई भी रास्ता हो मनुष्य को भीतर में सचेत रहना पड़ेगा कि यह जो भी कुछ दीखता है सब नश्वर है। मैं इसमें क्यों फँसा हूँ – और यह समझकर धीरे–धीरे इससे निकलना चाहिये। सत्संग में आने का मतलब यह है कि हमें पश्चाताप की ऐसी चोट लगनी चाहिए कि हम रो–रोकर आत्म निरीक्षण करें कि वर्षो हो गये फिर भी अभी तक कीचड़ में पड़े हैं। इस संसार की माया की कीचड़ से पाँव निकलता क्यो नहीं है।

Scanned by CamScanner

महापुरुष ने संसार को कीचड़ कहा है। जिसकी दलदल में हम सब फँसे हुऐ हैं सुबह से रात तक हम जितने भी काम करते हैं, हम अपने को और अधिक उस कीचड़ में फँसाते चले जाते हैं। बड़ा कठिन है इससे निकलना। परन्तु इससे निकलने की कोशिश करते हुए बार-बार फिसल जाने में तो किसी का दोष नहीं है। हाँ दोष उनका है जो निकलने का प्रयास ही नहीं करते। साधक को अपनी शक्ति से यथासंभव प्रयास तो निरन्तर करते रहना चाहिये।

प्रयास को ही साधना कहते हैं। साधना केवल आँख बन्द करने का नाम नहीं है। हमारे सारे दिन की दिनचर्या साधन रूप होनी चाहिये। वो इस संसारी कीचड़ से निकलने के लिए प्रयास रूप में होनी चाहिये। दैनिक चर्या ही हमारी साधना है – तब जाकर इस प्रयास की प्रथम सफलता हमारी बुद्धि में अंकित होगी। सब लोग जानते हैं कि आत्मा है। परन्तु स्वनिरीक्षण करके देखें कि उस आत्मा को अनुभव करने का हमारा प्रयास क्या है, कितना है।

खूब अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि इस चोले में रहते हुए अपने लक्ष्य की प्राप्ति करनी है – अर्थात् अपने आपको पहचानना है, ईश्वर में अपने आपको लय करना है। इसके लिये समझ के अतिरिक्त जागरूकता होनी चाहिये कि आत्मा क्या है ? आत्मा का स्वरूप क्या है और आत्मा का स्थान कहाँ है।

सब साधकों को, विशेषतः सभी पुराने साधकों को, जागरूक ही नहीं अपितु अत्यंत गंभीरता से, एक पल भी गंवाये बिना,

Scanned by CamScanner

अपने ध्येय की ओर बढ़ते रहना चाहिये और इसी प्रयास में पूरी लगन से संलग्न रहना है...........तभी जीवन के ध्येय की ओर प्रगति होगी।

गुरुदेव आपका कल्याण करें।

●●●

पीढ़ी

सोच किये कब सोच में आये, सोच जो लाखों बार करें,
चुप रहने से मन कब चुप हो, चुपके ध्यान हज़ार करें।
भूखे रहकर भूख न जाये, बाँधें के गौ कुल दुनियाँ लायें,
लाख हज़ार करें चतुराई, एक भी साथ न लेकर जायें।
झूठ का परदा चाक ही क्यों न कर, सच बाले बन जायें हम,
हुक्में रज़ा पर चलना नानक, साथ ही लिखा लायें हम।

Scanned by CamScanner

होली का त्योहार मनाने का वास्तविक भाव

फागुन की पूर्णिमा की रात्रि में होली जलाई जाती है। भक्त प्रहलाद को प्रभु की ओर से हटाने के लिये उनके पिता हिरण्यकश्यप ने कई उपाय किये जो निरर्थक सिद्ध हुए। तब अपनी बहन होलिका की सहायता से उसे जलाने की योजना बनाई। उसको वरदान था कि वह आग में नहीं जलेगी, परन्तु परमपिता परमात्मा की लीला विचित्र है। बुआ होलिका जल जाती है क्योंकि उसे यह पता न था कि यदि उसके साथ कोई और होगा तो उसको आग लग जायेगी। बालक प्रहलाद गोद में बैठे हैं। रोम–रोम उनका राम–राम, राम–राम कर रहा है। निर्मल, कोमल, आत्मरूप प्रकाशमय बालक को कुछ नहीं होता है। बालक प्रहलाद को तो अटूट विश्वास था जो कि विशेष गुण है – साधक के लिये। परन्तु क्या हमें ईश्वर के प्रति इतना सुदृढ़ विश्वास है ?

इसके बाद भी पिता हिरण्यकश्यप ने पुत्र को बहुत यातनायें दी। जब प्रहलाद को जलाने के असफल प्रयास से भी उसका राम नाम का प्रभु–गुणगाान नही रूका तो हिरण्यकश्यप ने खंभे से बाँधकर मारने की कोशिश की। स्तम्भ गर्म करके कहा गया कि वो उसका आलिंगन करें। इस वक़्त वो कुछ घबरा गया। परन्तु

Scanned by CamScanner

ईश्वर की लीला थी, भगवान स्तम्भ से एक चींटी के रूप में प्रकट हुए। प्रहलाद देखता है कि एक चीटी स्तम्भ पर चल रही है, तो मुझे क्या होगा, मैं भी आलिंगन कर लेता हूॅ। वो स्तम्भ शीतल हो गया। वहॉ भी बालक विचलित न हुआ। तब भगवान ने नरसिंहावतार लेकर अहंकारी क्रूर राजा का संहार किया है।

हिरण्यकश्यप ने प्रयास किया कि वो बच्चा राम का नाम छोड़कर पिता का नाम लें, उसे ही ईश्वर माने। ये दूसरा रावण था। यह कहना कि उसको कुछ पता नहीं था, ऐसी बात नहीं थी। शक्तिशाली होने के साथ ही वह बड़ा ज्ञानी भी था। जितना अधिक व्यक्ति योग्यता में आगे बढ़ता है, बलशाली होता है, उसमें सूक्ष्म अहंकार आ जाता है।

गुरु भी यही काम करता है। गुरु की आवश्यकता इसलिये होती है कि इन बाधाओं से साधक को बचाता रहे, वो लोग मन के पीछे लगकर अहंकार में फँस जाते हैं व इनकी प्रगति रूक जाती है जैसे कि रावण व हिरण्यकश्यप के साथ हुआ। और ये काम हर वक़्त होता रहता है। ये नहीं कि कोई विशेष समय आयेगा। हर वक्त प्रकृति हमारी परीक्षा लेती रहती है।

उसी स्मृति में आज भी होलिका दहन की प्रथा के अनुसार घर-बाहर मिलकर होली जलाई जाती है। आध्यात्मिक दृष्टि से तो यह है कि बुआ (होलिका) और प्रहलाद के रूप में अज्ञान और अहंकार को जलाया और सत्य की विजय का त्योहार मनाया जाता है।

प्रहलाद की निष्ठा और अटल विश्वास देखकर जब भगवान नरसिंह बड़े खुश हुए तो भक्त बालक से कहा – "प्रिय पुत्र, मैं

Scanned by CamScanner

तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ। तुम कुछ वर माँगो।'' बालक में सरलता होती है - जो प्रभु का अति प्रिय गुण है। वो कहता है ''पूज्य प्रभु जी मुझे कुछ नहीं चाहिए।'' फिर भी प्रभु के आग्रह करने पर प्रहलाद का एक और महान गुण प्रकट हुआ - क्षमा का। बैरी-विरोधी के प्रति कोई बुरी भावना न रखते हुए उसके अपराध को भी क्षमा करने की उदारता।

इसी ईश्वरीय गुण से प्रेरित बालक बोला 'भगवान, आप प्रसन्न रहें। यदि आप चाहते ही हैं कि मैं कुछ माँगूं, तो आप मेरे पिता को क्षमा कर दें। प्रभु, मेरे पिता को परलोक प्रदान कर दें।'' भगवान पूछते हैं कि ''उसने तो तुम्हें इतनी यातनायें दी है फिर भी तुम पिता का कल्याण चाहते हो - ऐसा क्यों?'' प्रहलाद का फिर यही उत्तर था कि ''मुझे नहीं मालूम। वो मेरे पिता हैं जिन्होंने मुझे जनम दिया है। वो जन्म नहीं देते तो मैं आपके चरणों में कैसे पहुँचता?

घमंडी राजा के वध और भक्त बालक की विजय पर प्रभू की कृतज्ञता और खुशी में ही सारी प्रजा में हर्षोल्लास मनाया गया, और आनंदपूर्वक होली खेली गई। शायद इसी परम्परा के नाते आज भी होली जलाकर अगले दिन होली खेलते हैं।

इधर काफी समय से ये होली का त्योहार बड़ा गंदा हो गया था। अब भी पंजाब में इसका बड़ा भद्दा रूप है। उत्तर प्रदेश में और सम्भवतः बिहार में यह रूप नहीं है। मथुरा, वृन्दावन में तो बड़े पवित्र तरीके से होली खेली जाती है। प्रेम की रासलीला होती है, वहाँ मानो भगवान कृष्ण प्रत्येक गोपी के साथ होली

Scanned by CamScanner

खेल रहे हैं रंग और गुलाल से उन गोपियों की प्रेम प्रदर्शनी होती है। सच्चे अर्थों में यह दिन एक बड़ा प्रेरणादयक दिन है। रंग बाहर से नहीं खेलना – रंग अन्दर से लगाना है, और अपने आपको रंगमय कर देना है।

कहीं-कही भगवान कृष्ण और गोपियों की होली खेलने या रासलीला के विषय में बड़ी भ्रान्ति और गलत धारणाएं व्याप्त है। जैसे कि विवाहिता या कुंवारी गोपियां अपने-अपने घर-वर को तज कर भगवान के पास होली खेलने या रास करने कैसे और क्यों जाती थी? इसके विषय में समझना होगा कि एक तो श्रीकृष्ण एक बालक ही थे, क्योंकि नौ वर्ष की बाल अवस्था में तो वे मामा कंस का मर्दन करने के लिए मथुरा को चले गये थे। दूसरे, वे रास की लीला कोई शरीरिक नृत्य नहीं थी वह तो परमात्मा के प्रेम की प्यासी आत्माओं की आध्यात्मिक मिलन-बेला थे, आत्म विभोर कर देने वाली दिव्यलीला थीं। गोपी रूपी आत्मा (साधक) को ऐसी परम आनंद अनुभूति की घड़ी में घर-परिवार, प्रेमीजन एंव संसारिक मायावी बातों की सुध-बुध रहना कोई बड़ी बात नहीं थी।

बहुत से लोगों की आलोचना का एक और विषय ये है कि भगवान कृष्ण की तो 16000 से अधिक रानियाँ थीं। यह प्रसंग भगवतपुराण में भी है। मैं नहीं कह सकता कि वो सच्चाई थी क्योंकि कवि लोग काव्य रचना में बढ़ा-चढ़ा कर बात कहते हैं। पौराणिक साहित्य की गाथाओं के विषय में यह समझना ज़रूरी है कि वेद व्यास जी ने बहुत सी, सूक्ष्म तत्वज्ञान की बातों को

Scanned by CamScanner

सरलता से समझाने के लिए रूपक–कथाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इसमें सोलह हजार नाड़ियों के स्वामी जीवात्मा द्वारा नियंत्रण की सूक्ष्म बात के रूप को न भी माना जाये, तो यह सच्चाई नहीं है कि कृष्ण भगवान की हज़ारों रानियां थी। वे तो उनके मात्र आश्रयदाता थे।

बात यह थी किसी कारण एक राजा ने जिसकी सोलह हज़ार नारियाँ थी उसने उनके लालन–पालन सुरक्षा का हाथ खींच लिया था। बाद में भगवान श्रीकृष्ण पहुँचे हैं तो रानियाँ बहुत रोयी हैं कि हमारा कौन है? भारत में पति के बिना औरत का अस्तित्व अपूर्ण है। भगवान ने उस राजा की उन सोलह हज़ार रानियों को संरक्षण दिया है। उन्हें असहाय अवस्था में यह आश्वासन दिया था कि 'आप चिन्ता नहीं करें। मैं आपकी देख–भाल करूँगा। आपको किसी प्रकार की तकलीफ़ नहीं होने दूँगा। भगवान ने उनको अपनी स्त्री या धर्मपत्नी नहीं बनाया।

वैसे भी श्री व्यास जी भागवत में स्पष्ट करते हैं कि वो सब रानियाँ अपने–अपने पृथक स्थान पर रहती थीं। पर प्रत्येक रानी यह अनुभव करती थी कि भगवान कृष्ण उसके आस–पास ही हैं जैसे वृन्दावन में गोपियों की इस अनुभूति को दिखाया जाता है कि प्रत्येक गोपी के साथ भगवान एक जैसी पोशाक और रूप में रास–लीला कर रहे हैं। यह गलत या असंभव नहीं है। ईश्वर सब कुछ कर सकता है। ईश्वर रूप में जो ऐसे महापुरुष आये हैं वो भी ऐसी लीला करते हैं और करते रहेंगे। ईश्वर सर्वव्यापक हैं। ऐसे महापुरुष भी सर्वव्यापक होते हैं।

Scanned by CamScanner

आप खूब होली खेलें। आपस में स्नेह का आदान–प्रदान करें। परन्तु प्रेम जैसे सतगुणों का प्रसार होना चाहिये। प्रेम, प्रेम–ही–प्रेम, निस्वार्थ और निर्मल प्रेम। किसी प्रकार की आशा नहीं होनी चाहिये। क्यों करते हैं यह प्रेम – यह हम भी नहीं जानते। बस प्रेम करना तो हमारी आदत (Second Nature) हो जाये। ईश्वर में प्रेम के लिये तो सर्वप्रथम आवश्यक है – प्रहलाद जैसा सच्चा दृढ़ विश्वास हो जो कि बड़ा कठिन है। हम तो अपने अहं के ऊपर ही विश्वास करते हैं, ईश्वर के प्रति उतना विश्वास नहीं है, ना ही उतनी श्रद्धा है।

तो इस त्योहार से हमें प्रेरणा लेनी चाहिए और अपनी साधना को उसी तरह दृढ करना चाहिये जैसे प्रहलाद और ध्रुव ने किया। इन दो बच्चों का अपने भारत के इतिहास में, भारत की संस्कृति में एक महान स्थान है। बालक ध्रुव के नाम का जो सितारा है वो सबसे ऊँचा, सबसे अधिक चमकता है। उसमें भी यही दैवी गुण थे। किसी के शरीर की पूजा नहीं होती, गुणों की पूजा होती है।

साधना में क्षमा एक महान गुण है, जो प्रत्येक साधक के हृदय में पुष्ट होना चाहिये और व्यवहार में व्यक्त होना चाहिये। हम कहते हैं कि हमें क्रोध आ जाता है। उसका कारण है कि हमारे हृदय में क्षमा है ही नहीं। क्षमा का गुण सीखना बड़ा कठिन है। लोगबाग चाहते हैं कि बस आँख बन्द करें और प्रभु–रूप के दर्शन हो जायें। ये यात्रा बड़ी लम्बी है। जब तक भगवान कृष्ण ने जो गुण भक्त के लिये बताये हैं (गीता के बारहवें अध्याय में,

Scanned by CamScanner

अन्तिम 12 से 20 श्लोक तक) वे गुण स्वभाविक नहीं बनते, जब तक कि हमारे दैनिक आचरण में सहज ही प्रकट नहीं होते तो आप समझ लीजिये कि अभी भी हम मंजिल से दूर हैं – बहुत दूर हैं। सच्चे साधक के लिये उन गुणों को सराहना और अपनाना भी पूजा है।

आदमी के गुणों और ईश्वर में जब कोई अन्तर नहीं रह जाता तो वही दशा पूजनीय हो जाती है। ज्ञानी कह देता है – "अहं ब्रह्मास्मि"। यह ठीक है कि ज्ञान साधना में अहं खत्म हो जाता है। हममें जो आवरण है वह क्षीण हो जाता है। आत्मा परमात्मा में विलय हो जाती है। परन्तु सावधान रहें, धोखा हो जाता है जैसे रावण को। रावण कोई साधारण व्यक्ति नहीं था। महान ब्राह्मण था – साधारण चार वर्णो वाला ब्राह्मण नहीं था। अपितु ऐसा ब्राह्मण जिसने ब्रह्म को जाना था, परन्तु अहंकार ने, माया ने ऐसा दबोचा कि वो अपने लक्ष्य से गुमराह हो गया। और यही स्थिति हिरण्यकश्यप की थी। इसलिये उसको दूसरा रावण कहते हैं। वह भी शास्त्रों का विद्वान था, उच्च कोटि का साधक था और अत्यंत शक्तिशाली भी था। उसने इन्द्र देवता को पराजित किया था क्योंकि इसके भाई की बहू को इन्द्र उठाकर ले गया था। पौराणिक गाथाओं की ऐसी मान्यता है कि इन्द्र देवता का जिन्होंने भी विरोध किया वो राक्षस कहलाने लगे। वैसे हर विरोधी (जातिवाचक) राक्षस नहीं था। दानव के अर्थ वाले राक्षस का बेटा प्रहलाद कैसे हो सकता था ? प्रहलाद को राक्षस वाली जाति से कही भी संबोधित नहीं किया या माना गया है। हम ईश्वरीय गुणों की पूजा करें। ईश्वर के रूप की पूजा करें।

Scanned by CamScanner

परन्तु रूप के साथ-साथ गुणों की पूजा करके उन्हें अपनाना भी है। फिर गुणों को अपनाने का प्रयास आवश्य करें। आप किसी प्रकार की भी पूजा करते हों, ईश्वर के गुणों को तो अपनाने का भरसक प्रयास करना होगा। उनको अपने जीवन में ढ़ालने का प्रयास होना ही चाहिए। फ़िलास्फ़ी के तौर पर बुद्धि में समझ लिया पर व्यवहार में उन गुणों को नहीं उतारा तो क्या लाभ हुआ ?

हमारे हृदय में किसी के प्रति श्रद्धा है तो किसी के प्रति विपरीत भावना है। कोई ऐसा व्यक्ति ही मिलता है जिसके आचरण या हृदय में पूर्णरूपेण ईश्वर के प्रिय गुणों के दर्शन होते हों। क्षमा करेंगें, मुझे तो एक भी नज़र नहीं आता। हमारी मंजिल बहुत दूर है। इसीलिये मैं तो बार-बार निवेदन करता हूँ कि जब भी हो सके धार्मिक ग्रंथ या महापुरुषों की वाणी पढ़ें। आपका जिनसे संबंध है, श्रद्धा है, उन महापुरुषों की वाणी पढ़ें। सबमें एक ही जैसे तथ्य हैं। उनके महान गुणों का मनन करें। इन गुणों को धारण करने की कोशिश करें।

होली क्षमा करने का भी महान अवसर है। वास्तव में होली का पर्व तो रात को अर्थात बीते हुए समय के अंधकार में, अंधकार और अज्ञान को जलाकर ईश्वर के प्रेम में रंगते जाना है। होली का मतलब है "हो+ली" यानी जो हो चुका है उसको भूल जाइये। जो होना था वो हो गया। अब नई सुबह में (होली खेलने के समय से) नई उमंग, उत्साह और प्रेरणा की नई जिन्दगी होनी चाहिये। नवीनता का मतलब है पारिवारिक और सामाजिक हर क्षेत्र में, प्रेम प्यार के सदगुणों के राग-रंग सहित प्रगति करने

Scanned by CamScanner

की नई पहल होनी चाहिये। नवीनता – परस्पर प्रेम तथा आत्मिक और आध्यात्मिक उन्नति की होनी चाहिये।

सत्संग में आने का लाभ तभी है जब हमारे दिमाग से मेरा–तेरापन आन्तरिक साधना करते हुए, व्यवहार में भी खत्म हो जाये। न कोई हमारे वैरी या दुश्मन हों न कोई बेगाना या पराया लगे।

ना कोई बैरी, ना ही बेगाना,
सगल संग हमको बन आई।
बिसर गई सब तात पराई,
जबसे साध संगत मोहे पाई।।

बेगाना का अर्थ बड़ा रहस्यमय है। बेगाना का अर्थ है अनात्मा यानि बिना आत्मा वाला। परन्तु ऐसा तो कोई नहीं है। मेरे में जो आत्मा है वैसी ही सबमें आत्मा है। आत्मा के लिहाज़ से हम सब एक हैं। ये बेगानापन और मेरा–तेरापन तो माया का प्रभाव है, ज्ञान नहीं। और जब मैं मेरापन का अहंकार या दम्भ बेहद बढ़ जाता है तो वही मनुष्य हिरण्यकश्यप आदि जैसा बन जाता है तब मनुष्य स्वयं भी दुखी होता है और संसार को भी दुखी करता है।

आप सदा दिल खोलकर होली खूब खेलें। इसका वास्तविक संदेश ये है कि होली की प्रेममयी सामाजिक भावना के साथ आत्मिक आनंद की भी अनुभूति करें। होली का सच्चा आध्यात्मिक भाव समझें और भीतर में होली कैसे खेलें और उस आनंद को अपने चारों ओर खूब बाँटे। सबमें अपनत्व देखने लगें।

Scanned by CamScanner

आत्मीयता का अनुभव करके आत्मिकता का दर्शन करें - अपनी आत्मा का, अपने गुरु का, भगवान का दर्शन करें। सबमें वही है - प्राणीमात्र में विद्यमान वही तो है।

सत्संग में जाने पर होली खेलने की भावना को समझने का लाभ तभी है जब गुरुदेव की कृपा से आपके अहंकार जैसे अवगुण भस्म होते जायें। और ईश्वरीय सदगुणों की सुगंध आपके आस-पास, घर में, परिवार-पड़ोस और समाज में फैले, उनकी दया-कृपा का रंग आपको सराबोर कर दे और दिनोंदिन गहरा होता जाये।

गुरुदेव आप सभी को शक्ति प्रदान करें।

Scanned by CamScanner